ੴ

साहिबु मेरा मिहरवानु

पंथ रत्न

ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन

के मुख्य लेख



74



१ओं सतिगुर प्रसादि ॥



साहिबु मेरा मिहरवानु

पंथ-रत्न

ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन

के मुख्य लेख

संपादक

मनजिंदर सिंघ

प्रकाशक



भाई चतर सिंघ जीवन सिंघ

अमृतसर

ISBN : 81-7601-977-4

प्रथम संस्करण : 2009

भेटा : 100-00



प्रकाशक

भाई चतर सिंघ जीवन सिंघ

बाज़ार माई सेवां, अमृतसर

फोन / फैक्स : 91-183-2542346, 2547974, 2557973

E.Mail : csjssales@hotmail.com, csjsexports@vsnl.com
cjgroup77@yahoo.com

Web site: www.csjs.com

(Printed in India)

मुद्रक : जीवन प्रिंटर्ज़, अमृतसर। फोन : 2705003, 5095774

समर्पण

पंथ-रत्न ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन

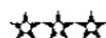
की

पवित्र आत्मा को समर्पण

—संपादक

विषय-सूची

संपादकीय	५
साहिबु मेरा मिहरवानु	७
गुर कै सबदि भरे भंडारा	२०
तेरे चाकरां पा खाक	३१
सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ	४२
जिउ हरि भावै तिउ रखीऐ	५३
गगन मै थालु	६६
कहि कबीर सो भरमै नाही	७८
सफलु जनमु भगता का कीता	९१
साचा साहिबु विसरिआ	१०३



संपादकीय

सिक्ख पंथ के महान अनुभवी विद्वान, पंथ-रत्न ज्ञानी संत सिंह जी मसकीन, विशाल ज्ञान-भंडार के सागर, सिक्ख संगत के दिलों की धड़कन, जिन्होंने विश्व-भ्रमण करके दुनिया के कोने-कोने में सिक्खी का प्रचार किया। इनकी बदौलत जिन मुल्कों में अभी तक सिक्खी का प्रचार नहीं था हो रहा, उन मुल्कों में भी सिक्ख धर्म के प्रचार के केंद्र बन गए। मसकीन जी जहां-जहां भी गए संगत ने भरपूर मान-सत्कार के साथ निवाजा। फिर संगत ने मसकीन जी के अनमोल वचनों को रिकार्ड करके संभाला। ऐसे विद्वान कुदरत कई सदियों के बाद ही पैदा करती है। सिक्ख पंथ की ओर से जितना सत्कार मसकीन जी को मिला, शायद किसी विरले को ही मिला हो।

आधुनिक युग में ऐसे साधन मौजूद हैं कि किसी महान व्यक्ति के विचार सदियों तक संभाले जा सकते हैं ताकि आने वाली पीढ़ियां इनसे मार्गदर्शन प्राप्त कर सकें। मसकीन जी अपनी उदाहरणा खुद ही थे। इनकी किसी दूसरे विद्वान के साथ तुलना नहीं हो सकती।

गुरसिक्खों के महान यत्न का सदका आज भी मसकीन जी के विचार आप पी.टी.सी. चैनल पर श्रवण कर सकते हो। यह उस महान विद्वान के प्रति श्रद्धांजलि है। दास ने मसकीन जी के विचारों को रिकार्ड फिर यह धैर्य से महसूस किया गया कि इन कैसिटों को लिखित रूप में कापी करके इनको छपाई का जामा पहनाया जा सके। इससे ये विचार घर-घर तथा सारी दुनिया तक पहुंच सकेंगे।

धार्मिक साहित्य में एक मुकाम हासिल करने वाली विश्व-प्रसिद्ध फर्म है भाई चतर सिंघ जीवन सिंघ पुस्तकों वाले। इन्होंने इस ओर विशेष ध्यान दिया है। इनकी दिली-तमन्ना है कि मसकीन जी के विचारों को कैसिटों से कापी करवा कर पुस्तकों के रूप में संगत

के कर-कमलों तक पहुंचाएं। इसी शृंखला की यह पुस्तक 'साहिब मेरा मिहरवानु' हाज़िर है। इसमें मसकीन जी के नौ लेक्चर हैं—'साहिबु मेरा मिहरवानु, गुर कै सबदि भरे भंडारा, तेरे चाकरां पा खाक, सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ, जिउ हरि भावै तिउ रखीऐ, गगन मै थालु, कहि कबीर सो भरमै नाही, सफलु जनमु भगता का कीता, साचा साहिब विसरिआ।' आशा है कि इस यत्न को सिख संगत भरपूर समर्थन देगी।

बी-१/२८४, मकसूदां, —मनजिंदर सिंघ
जालंधर।

साहिबु मेरा मिहरवानु

तिलंग महला ५ घरु ३॥

मिहरवानु साहिबु मिहरवानु॥

साहिबु मेरा मिहरवानु॥ जीअ सगल कउ देइ दानु॥ रहाउ॥

तू काहे डोलहि प्राणीआ तुधु राखैगा सिरजणहारु॥

जिनि पैदाइसि तू कीआ सोई देइ आधारु॥१॥

जिनि उपाई मेदनी सोई करदा सार॥

घटि घटि मालकु दिला का सचा परवदगारु॥२॥

कुदरति कीम न जाणीऐ वडा वेपरवाहु॥

करि बंदे तू बंदगी जिचरु घट महि साहु॥३॥

तू समरथु अकथु अगोचरु जीउ पिंडु तेरी रासि॥

रहम तेरी सुखु पाइआ सदा नानक की अरदासि॥४॥३॥

(अंग ७२४)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जी!

तिलंग राग में पंचम गुरु नानक यह बख़्शिश भरा हुक्मनामा आज हमारे सामने रख रहे हैं। इसमें मनुष्य की मूल समस्या को लिया है। समस्या चिंता है तथा चिंता करके मन डोलता है। हज़ारों प्रकार की चिंताओं में प्रबल चिंता है रिज़क की। धन्य श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी का फरमान है :

सभु किछु बहुतो बहुतु उपाइआ॥

(अंग १०४)

मनुष्य को जितनी आक्सीजन चाहिए, अरबों-खरबों गुना ज़्यादा

है। मनुष्य को जितना पानी चाहिए या सारे जीवों को जितना पानी चाहिए, अनंत गुना ज़्यादा है। जीने के लिए जितनी पवन चाहिए स्वच्छ, अनंत गुना ज़्यादा है। इसी तरह रहने के लिए जितनी ज़मीन चाहिए, अनंत गुना ज़्यादा है। एक चौथाई धरती पर मनुष्य रह रहे हैं तथा शेष धरती ग़ैर-आबाद है। हिन्दोस्तान से साढ़े तीन गुना बड़ा है कनाडा, जिसकी कुल आबादी ढाई-तीन करोड़ है। हज़ारों मील तक ज़मीन खाली पड़ी है, जंगल ही जंगल है। खाने के लिए भोजन चाहिए, अनंत गुना ज़्यादा है। फिर मनुष्य की दुनिया में अफरा-तफरी, चिंता और फिर कहीं-कहीं भुखमरी। इन हालातों को देखकर मन डोलता है। शब्द में मूल उपदेश है :

तू काहे डोलहि प्राणीआ......॥ (अंग ७२४)

मन डोलता है, विश्वास नहीं बंधता। रिज़क के सम्बंध में तो विश्वास बंधता ही नहीं। मैं कहीं भी चला जाऊं, पवन हर जगह मौजूद है। मुझे हवा कमाने के लिए यत्न नहीं करना पड़ता। यह ठीक है कि हवा के बिना मैं एक सेकेंड भी नहीं जी सकता, मगर हवा के लिए मुझे कुछ मेहनत नहीं करनी पड़ती। यह तो व्यापक है। इसकी मुझे कोई चिंता नहीं। पवन के प्रति मैं निश्चिंत हूं, मन नहीं डोलता। दूसरा है पानी, क्योंकि मनुष्य दिखा रहा है कि पानी के दरिया चल रहे हैं, पानी की वर्षा होती है। मैं कहीं भी चला जाऊं, मुझे यह चिंता भी नहीं कि पानी, मिलेगा कि नहीं, मगर मैं कहीं भी होऊं, यह चिंता है कि रोटी मिलेगी कि नहीं। रोटियों की वर्षा नहीं होती, रोटियों के दरिया नहीं चलते। रोटी व्यापक नहीं है। यही चिंता करके मन डोलता है।

चिंतातुर मनुष्य चिंतन नहीं कर सकता। जपु जी पढ़ेगा, उसके अंदर चिंता चलेगी, गुरु का चिंतन नहीं चलेगा। चिंतातुर मनुष्य गुरुद्वारे में बैठा है, गुरु का चिंतन नहीं चलेगा, रोटी की चिंता चलेगी। कुछ ऐसी कहावतें भी हैं कि 'जिन्हां दी कोठी दाणे, तिन्हां दे कमले वी सिआणे।' जिनके घर में रोटियां बहुत ज़्यादा हैं, पागल भी समझदार समझे जाते हैं। आप ने कभी सुना है कि जिनके घर में पानी ज़्यादा है और वे समझदार हैं? जिनके घर में हवा ज़्यादा है और समझदार

ज़्यादा हैं? यह स्वाभाविक उपलब्ध है। प्रकृति चाहती है, परमात्मा चाहता है कि मनुष्य रोटी के लिए उद्यम करे, हाथ-पैर चलाए। यह अपनी ज़िंदगी को हरकत में लाए:

उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु॥

(अंग ५२२)

मनुष्य ऐसा चाहता है जैसे पानी की वर्षा होती है, पानी के दरिया होते हैं, रोटियों की भी वर्षा हो, रोटियों के भी दरिया हों। साहिब कहते हैं :

ना करि चिंत चिंता है करते॥ (अंग १०७०)

तू चिंता न कर। तू जिसके घर में मेहमान है, मालिक को चिंता करने दे, तू तो मेहमान है, आज है तो कल नहीं। परमात्मा की बनाई हुई यह सराय है। गुरु नानक देव जी कहते हैं कि वह चिंता कर रहा है :

सो करता चिंता करे जिनि उपाइआ जगु॥ (अंग ४६७)

पृथ्वी को कैसे स्थिर रखना है? सूर्य को कैसे गर्दिश में रखना है? पवन को कैसे व्यापक रखना है? सूर्य तथा पृथ्वी की दूरी कितनी रखनी है? विश्वास कीजिए, यदि यह थोड़ी-सी दूरी कम हो जाए तो यह जमीन जल कर राख हो जाएगी। यह सब कुछ परमात्मा ने नाप-तौल कर रखा है। उसे चिंता है। तू चिंतन कर। इस हिसाब से सारी मानवता को बांटेंगे तो दो हिस्सों में विभाजित होगी—एक वह जगत जो वाशना (इच्छा) में जी रहा है तथा दूसरा वह जगत जो प्रार्थना में जी रहा है।

अरदास में यदि मांग आ गई तो अरदास, अरदास नहीं है। अरदास वह अरदास है जिसमें धन्यवाद है। वह बुलंदियों पर ले जाएगी। जिसमें मांग है, वह नीचे ले जाएगी। भिखारी का केवल हाथ ही नीचे नहीं होता, भिखारी की अक्ल भी नीचे होती है। कभी आप भिखारी लोगों में अज़ीम मनुष्य नहीं देखोगे। भिखारी का स्वाभिमान भी नीचे हो जाता है, ग़ैरत भी नीचे हो जाती है, उसका आचार, किरदार भी नीचा हो जाता है। भिखारियों के बारे में मैंने भारत के किसी लेखक का एक

बड़ा प्रबल एवं लम्बा आलेख पढ़ा था कि यह भिखारी करते क्या हैं? दुराचारी हैं, शराबी हैं, कातिल हैं, रोज़ लड़ते हैं और सुबह-सुबह मासूम बनकर मांगते हैं; उच्च आचरण की उम्मीद कर नहीं सकते।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के वचन मैं आपके सामने रखूं :

ममा मागनहार इआना॥ (अंग २५८)

मांगने वाला मूर्ख है, नादान है, बेवकूफ है। यह कम बात नहीं। इकबाल तो यहां तक कहता है :

खुदी को कर बुलंद इतना कि हर तकदीर से पहले,
खुदा बंदे से खुद पूछे, बता तेरी रज़ा क्या है?

बता तो सही, तेरी चाहत क्या है? तुझे क्या चाहिए? तेरी मर्ज़ी क्या है? खुदा पूछे। मैं खुदा से कहूं, यह चाहिए, वो चाहिए। यह कैसा खुद है जिसे मेरी ज़रूरतों का भी नहीं पता? यह कैसी मां है, पालने में पड़े हुए बच्चे की ज़रूरतों का भी इसे नहीं पता होता? ये कैसे बाप हैं? इस मां ने मां होने का फर्ज़ नहीं निभाया। इस बाप ने बाप होने का फर्ज़ नहीं निभाया। सही अर्थों में जो पिता है, सही अर्थों में जो मां है, बच्चे के रोने से पहले उसकी आवश्यकता की पूर्ति कर देती है। इतना विश्वास यदि बैठ जाए परमात्मा पर, परंतु आप कहोगे, मांगते हम बहुत कुछ हैं, मिलता तो नहीं।

ध्यान से सुनना। हम वो मांगते हैं जो हमारी आवश्यकता नहीं है। हम वो-वो मांगते हैं जो हमारी योग्यता भी नहीं है। एक पांच वर्ष का बच्चा अपने बाप से कहे और बाप हो थानेदार तथा इसके पास भरा हुआ पिस्तौल हो, कहे, मुझे दे और पिता कहे, बेटा ! यह खिलौना नहीं जो मैं तुझे दे दूं, भरा हुआ है, मैं तुझे नहीं दे सकता और वह रोए, बाप को दुश्मन समझ ले। जैसे यह बच्चा बाप से मांग कर रहा है तथा बाप नहीं दे रहा और बाप का न देना यह उसकी मेहरबानी है, देना उसकी कठोरता होगी। यदि देता है तो बाप मूर्ख है, नहीं दे रहा तो बाप समझदार है।

जिन-जिन हमारी मांगों की पूर्ति नहीं हो रही यह उसकी बख़्शिश है। मैंने रो-रो कर मांगी है, नहीं पूरी हुई। यदि नहीं देता तो उसकी

बख़्शिश है :

चंचल मति बारिक बपुरे की सरप अगनि कर मेलै॥

(अंग १२६६)

यह मासूम बच्चा सांप के मुंह में उंगली देना चाहता है तथा मां पकड़ती है और कहती है, नहीं। यह मासूम बच्चा जलती आग में हाथ डालना चाहता है तो मां कहती है, नहीं। यह अब मां को दुश्मन समझ बैठता है, रोता है। यह कैसी मां है मुझे आग में हाथ नहीं डालने देती? सांप के मुंह में उंगली नहीं डालने देती? बच्चे की दृष्टि में यह मां कठोर है। मैं रो रहा हूं यह मानती नहीं। चीखता-चिल्लाता हुआ कई बार मनुष्य कह देता है, हे प्रभु! इतना मैं तड़पता हूं, तू देता ही नहीं। उसका न देना ही उसकी बख़्शिश है। यदि मां कह दे, ठीक है, आग के पास जाने की क्या ज़रूरत है, मैं आग ला देती हूं, तो यह मां नहीं है, यह कसायण होगी। प्रार्थना धन्यवाद पर खड़ी है, अरदास शुक्राने पर खड़ी है :

ममा मागनहार इआना॥ देनहार दे रहिओ सुजाना॥

(अंग २५८)

यह जो मांग जगती है, कई बार ऐसा भी प्रतीत होता है कि मेरी ज़रूरत भी नहीं, यह मेरी मांग है। यह तृष्णा है। इसी को तृष्णा कहते हैं। समय के साथ-साथ शरीर कमज़ोर होता जा रहा है और तृष्णा जवान होती जा रही है, तभी हमें अगला जन्म दे देती है। बूढ़ी तृष्णा जन्म नहीं दे सकती, जैसे बूढ़े शरीर संतान नहीं उत्पन्न कर सकते। समय तक मेरी तृष्णा है। यह मुझे अगला जन्म देगी। यह जन्म तो दुख है। फिर मैं दुखी हूंगा। जन्म सारे दुखों की खान है :

प्रभ जनम मरन निवारि॥ हारि परिओ दुआरि॥

(अंग ८३७)

तृष्णा सदा जवान रहती है। एक जवान इतना मुसीबत में नहीं होता जितना बूढ़ा है। कारण? जवान की तृष्णा जवान है, बूढ़े की तृष्णा भी जवान है। तृष्णा की पूर्ति के लिए जवान यत्नशील है, बूढ़ा तृष्णा की पूर्ति कर सके, शरीर यत्नशील नहीं है। शरीर में ताकत नहीं।

जवान तृष्णा बूढ़े को दुखित करती है। तृष्णा को मारने का ढंग है, प्रार्थना। ख्वाहिशों को, कामनाओं को मारा जा सकता है। मारने का तरीका क्या है? अरदास। लेकिन यदि मेरी अरदास भी तृष्णा पर खड़ी है तो यह अरदास नहीं है, तृष्णा है। यदि मेरी प्रार्थना भी तृष्णा पर खड़ी है तो फिर यह प्रार्थना नहीं है, तृष्णा है। तृष्णा इंसान को भ्रष्ट करती है।

इस चक्कर में न पड़ना कि जवानी भ्रष्ट हो जाती है। बूढ़े भी भ्रष्ट होते हैं। मछंदर नाथ बुढ़ापे में भ्रष्ट हुए। विश्वामित्र बुढ़ापे में भ्रष्ट हुए। रूप की तृष्णा, धन की तृष्णा, प्रभुत्ता की तृष्णा गिराएगी, भ्रष्ट करेगी। यह तृष्णा दिन-प्रतिदिन जवान होती जा रही है तथा शरीर बूढ़ा होता जा रहा है। शरीर बूढ़ा हो, इससे पहले तृष्णा को मार दें। केवल प्रार्थना रह जाए। मात्र यही एक ढंग है।

एक पंडित गुलाब सिंघ जी महाराज निर्मले, प्रबोध चंद्र नाटक लिखा, जिन्होंने बहुत-से ग्रंथ लिखे थे। दूसरे राज-योगी भरथरी। दोनों बूढ़े हो गए हैं और वृद्ध अवस्था की अपनी मानसिक दशा बयान करते हैं। वे कहते हैं कि शरीर की शक्ति जाती रही है, आंखों की ज्योति भी जाती रही है, कानों की स्रोत (श्रवण-शक्ति) भी जाती रही है। मेरे जो बाल-सखा मित्र थे वे भी नहीं रहे। मेरी जाति वाले अर्थात मेरी तरह साधना करने वाले अपना जीवन सफल करके चले गए, प्रभु में लीन हो गए। जो सेवक हैं वे भी मेरा साथ छोड़ गए। क्यों? बूढ़ा है, बार-बार तंग करता है। खुद तो कुछ कर नहीं सकता और ज़ुबान ही चलाता है, यह करो, यह ला दो। नमस्कार है तृष्णा तुझे! सभी छोड़कर चले गए, दिन-रात तुम साथ ही रह रही हो, मेरा साथ ही नहीं छोड़ती।

तृष्णा में मनुष्य कोई भी काम करे तो वह भ्रष्ट होता है। चाहे वह पाठ करे, कीर्तन सुने, परंतु भीतर तृष्णा है तो वह मनुष्य भ्रष्ट है। तृष्णा का बोध उसके दिल-दिमाग पर होता है। दूसरे, राज-योगी भरथरी। ये जब वृद्ध हो गए तो सच्चाई स्वीकार कर ली है। जप-तप करते हुए, साधना करते हुए एक दिन समझ आ गई और सत्य स्वीकार कर लिया कि मैं प्रार्थना में नहीं जी रहा, मैं तृष्णा में जी रहा हूं।

मैं कोई अरदास में नहीं जी रहा, मैं ख्वाहिशों में जी रहा हूं। तृष्णा विवश करती है कि यदि मैं कुछ हासिल नहीं कर सकता अपने हाथों से तो हाथों को फैलाकर मांग लूं। घर-घर में से भिक्षा मांग कर लाता हूं और अपनी उपजीविका चलाता हूं। आठ पहर में मैं एक समय भोजन छकता हूं, शरीर को हल्का-फुल्का रखता हूं ताकि नींद तंग न करे। जाग कर साधना करता हूं। नींद जब जोर से आती है, सो जाता हूं। न ज़मीन पर नीचे कुछ बिछाने को, न ऊपर कुछ ओढ़ने को। सर्दी-गर्मी मैं इसी तरह काटता हूं। कोशिश करता हूं कि किसी रिश्तेदार-संबंधी की मुझे याद न आए, कहीं मां-बाप की याद न आ जाए, भाई, पत्नी, बच्चों की याद न आ जाए, कोई रिश्तेदार-सम्बंधी मेरे विचारों में न आए। यौवन ढल गया, बुड्ढा हो गया, केश सारे सफेद हो गए। छोटी-छोटी कपड़े की कत्तरें एकत्र करके गुदड़ी बनाई है, पहनी है। बिलकुल सुनसान उजाड़ जंगल में मैंने झोंपड़ी बनाई है, जहां इंसानों का आना-जाना न हो। मनुष्य की पहुंच से दूर, मनुष्य मुझे दिखाई न दें, क्योंकि गोरख ने ऐसा कहा है। पढ़े हुए ग्रंथों को बार-बार पढ़ता रहता हूं। इस प्रकार मैं रोज़ साधना करता हूं, मंत्र बार-बार जपता हूं। थक जाता हूं तो धर्म-ग्रंथों का अध्ययन करता हूं। अध्ययन करते-करते थक जाता हूं तो फिर मंत्र का जाप करता हूं।

इस बुड्ढे योगी ने सच्चाई स्वीकार कर ली। हे तृष्णा रूपी बैल की सवारी करने वाले शिव जी! अभी तो तृष्णा मेरी सवारी कर रही है, मेरे पर सवार है। तू तृष्णा की सवारी कर रहा है तो तृष्णा मेरी सवारी कर रही है। मैं क्या करूं? तेरा-मेरा तालमेल कैसे बैठे? तृष्णा जो मेरे से करवाती है मैं करता हूं। तृष्णा के कारण चित्त जिसे याद करता है, करता है। यदि तृष्णा है तो विचारों के तल पर इंसान भ्रष्ट है। तृष्णा है तो चिंतन के तल पर, मानसिक तल पर इंसान भ्रष्ट है, शारीरिक स्तर पर भ्रष्ट नहीं हो सकता, क्योंकि बुज़ुर्ग है। शरीर में ताकत नहीं। यह भ्रष्टाचार स्वीकार कर रहा है भरथरी। बस, इसका स्वीकार करना ही आम इंसानों को इससे न्यारा कर देता है।

कहते हैं कि इंसान महान है। शरीर में कोई रोग हो तो इंसान डाक्टर को बताता है। कुछ ऐसे गुप्त रोग हैं जिनको इंसान दूसरों से

छिपाता है, न पता चले। तृष्णा तो है ही गुप्त रूप, मानसिक रोग। दूसरे को वैसे पता नहीं चलता और दूसरे को मनुष्य बताना भी नहीं चाहता कि मेरे में तृष्णा है। भरथरी बताते हैं कि मैं रोगी हूं। सभी बूढ़ों में तृष्णा चलती है किसी एक-आध बूढ़े को छोड़कर। किस बूढ़े को छोड़कर? जिनकी सुरति जुड़ी हुई है शब्द में। ब्रह्म-ज्ञान अंदर पैदा हो गया है, इसे हम बूढ़ा नहीं कह सकते। इस पर तृष्णा सवार नहीं हो सकती। बूढ़े में यदि बार-बार क्रोध प्रकट होता है तो तृष्णा के कारण। हो बूढ़ा और स्वभाव में चिड़चिड़ापन न आए, क्रोध न आए, कारण? तृष्णा बड़ी प्रबल है। पूर्ति हो सके परंतु शरीर में ताकत नहीं। सारी दुनिया के जो राजनेता हैं तथा जिनके पास सिंहासन हैं, ९७ प्रतिशत बूढ़े हैं। ताकत उनके हाथों में है जिनके हाथ कांप रहे हैं, शरीर लड़खड़ाता है। वृद्ध अवस्था में या नशे की हालत में या फिर कमज़ोर शरीर लड़खड़ाता है। तृष्णा एक ऐसा प्रबल नशा है जिसमें उस बूढ़े का मन लड़खड़ाता है। जवान की बात तो गुरबाणी इस प्रकार कहती है :

फरीदा उमर सुहावड़ी संगि सुवंनड़ी देह॥

(अंग ९६६)

कंचन जैसी काया है, जवानों में जो अमृत वेले उठकर घंटा-दो घंटा वाहिगुरु-मंत्र का जाप करता हो और उसके भीतर से प्रार्थना पैदा हो, 'वाहिगुरु! तेरा शुक्र, तेरा धन्यवाद', वह आयु ऐसी है, तृष्णा की पूर्ति कर सके। शरीर में ताकत है तो प्रार्थना पैदा ही नहीं होती। यदि किसी जवान के अंदर प्रार्थना पैदा हो गई है तो समझ लेना कोई प्रबल संस्कार हैं। कोई घराना अच्छा मिल गया है, सोसायटी अच्छी हो गई है तो सतसंग का प्रताप है, नहीं तो मुश्किल है। जब यह बूढ़ा पदार्थ हासिल करने योग्य नहीं रहता तब परमात्मा को हासिल करने की कोशिश करें।

पदार्थ को हासिल करने के लिए जितनी शक्ति चाहिए उससे कई गुना ज़्यादा शक्ति चाहिए परमात्मा-तत्व को हासिल करने के लिए। प्रभुत्ता की प्राप्ति के लिए जितनी सियानप चाहिए उससे अनंत गुना ज़्यादा सियानप और शक्ति चाहिए प्रभु की प्राप्ति के लिए। यह तो

गंवा बैठा है। हमेशा धर्मिक मंदिरों में आपको ढली हुई ज़िंदगियां मिलेंगी, बूढ़े शरीर मिलेंगे, जवान तो कहीं-कहीं दिखाई देगा।

जो मेरी मांग पूरी नहीं हुई, इसका न पूरा होना ही मेरे लिए भला था। इतनी बात की यदि समझ आ गई तो धर्म की दुनिया में गति हो सकती है, गिला-शिकवा दूर हो जाता है, धन्यवाद मनुष्य के पास आ जाता है। शुक्रिया जिसका भी करोगे उसके नजदीक आ जाओगे, खुद को मनुष्य हल्का महसूस करेगा। आजकल तो शुक्राने का अखंड पाठ रखवाना एक कारेबार चल पड़ा है। यदि न चलता फिर नहीं रखाना था। यह कोई बंदगी है। यह सब दुनियावी सिलसिला चल रहा है संसार में। जब मनुष्य धन्यवाद में आ जाता है, शुक्र है तेरा सतिगुरु! मांग कोई भी नहीं, तो समझदार हो जाता है, नासमझ नहीं। पता है मेरे प्रभु को कि मुझे क्या चाहिए !

अणमंगिआ दानु देवणा कहु नानक सचु समालि जीउ॥

(अंग ७३)

तू उसका चिंतन किए जा, बिना मांगे तेरी झोली में डालता जाएगा। उसको पता चलेगा कि अब इसकी यह आवश्यकता है। मां को पता है कि बच्चा बड़ा हो गया है, इसका चोला बड़ा सिलवाना है। विश्वास करे, एक बार यह अनुभव में आ जाए कि मेरी आवश्यकताओं की पूर्ति करता जाता है, करता जाता है, मेरी तृष्णा की पूर्ति नहीं करता वो कारण? तृष्णा की पूर्ति नहीं हो सकती। तृष्णा आग है। इसमें जितनी लक्कड़ियां डालो, भस्म।

छः सौ बेगमें थीं नज़ाम हैदराबाद की, परंतु तृष्णाओं की पूर्ति न हुई। सैंकड़ों देश फ़तह कर लिए सिकंदर ने परंतु लोभ की पूर्ति न हुई। अहंकार की तृष्णा, अहंकार कहता है मैं हूं, मैं हूं। तू क्या है? तू कुछ भी नहीं। अहंकार की तृष्णा हिंसक बना देगी, लोभ की तृष्णा बेईमान बना देगी, काम की तृष्णा दुराचारी बना देगी। मुझे प्रार्थना करने का ढंग नहीं आया। मैं तो डगमगा रहा हूं। डगमगा रहा है तो गिरेगा। तृष्णा में जो डगमगा रहा है भ्रष्ट हो जाएगा।

साहिब यहां कहते हैं कि मत डगमगा, शुक्राने में आ जा। वह सत्य परिपूर्ण परमात्मा बड़ा मेहरबान है। वह तेरे शारीरिक मां-बाप

से ज़्यादा समझदार है। परमात्मा की समझ का तब पता चलता है जब तृष्णा का पर्दा आंखों से एक ओर हो, ऐसे नहीं पता चलता। तृष्णा मेरे सामने है तो गुरु कुछ भी नहीं है, मेरी तृष्णा है। गुरु तब मेरा मित्र है जब मेरी तृष्णा की पूर्ति करे। जो गुरु मेरी तृष्णा की पूर्ति करने लगे वह गुरु मेरा गुरु नहीं है, वह तो दुश्मन हो गया। नहीं पूर्ति करता गुरु। जब भी गुरु पर शिकवा पैदा हो जाए, हे गुरु! हम तो थक गए तेरे दर पे आ-आ कर, माथा रगड़-रगड़ कर, कला तो बनी नहीं। गुरु पर जब भी गिला पैदा हो जाए, समझ लेना इसने अभी गुरु के दिल-दिमाग को समझा नहीं। जो मेरे लिए हानिकारक होगा उसकी पूर्ति नहीं करेगा। हो सकता है किसी के लिए गरीबी की भी आवश्यकता हो, हो सकता है किसी के लिए दुख की भी आवश्यकता हो और बिना दुख के यह शायद न ठीक हो।

दो हाजी, दोनों फ़कीर थे। अंतर मात्र इतना था कि एक मुरशिद था और एक उसका चेला था। हज करने जा रहे हैं। अफ़गानिस्तान से चले हैं पैदल। जगह-जगह पड़ाव करते जाना था। चले तो दूसरे गांव से दो खलीफे और मिल गए। वे भी साथ चल पड़े। उन्होंने भी मुरशिद को मुरशिद मान लिया। चारों का काफिला जा रहा है। शाम हो गई। एक वृक्ष के नीचे विश्राम किया। इशा की नमाज़ पढ़ी है। यह फकीर कहता है एक से, जाओ, कसबे में से ख़ैरात मांग कर लाओ। एक फकीर चला गया। ३०-४० घर होंगे। प्रत्येक द्वार पर दस्तक दी है। कोई द्वार तो खुला ही नहीं। किसी ने खोला और कहा, तू हट्टा-कट्टा हैं, मांगता क्यों है ? किसी ने कहा, हज करने जा रहा है, यदि पैसे नहीं थे तो हज करने की आवश्यकता क्या थी? किसी ने कुछ कहा, दो-चार ने तो गालियां भी निकाल दीं। आ गया वापिस। मुरशिद कहता है, कुछ मिला है? कहता है, हां। यहां रख। उसने गालियां देनी शुरू कर दीं कि यह मिला है। मुरशिद कहता है कि अब हमने सोना है और शुक्राना करके सोएंगे। अब मुरशिद अरदास करता है, हे ख़ुदावंद ताअला! आज की जो हमारी ज़रूरतें थीं वह पूरी कर दीं, तेरा लाख-लाख धन्यवाद। रहमत करना। धन्यवाद करते हुए सवेरे उठें। सो गए। वे तीनों सोचने लगे कि दिन भर के भूखे हैं, यह फकीर कितनी

झूठी अरदास कर रहा है।

दूसरे दिन चले। दिन भर चलना था, शाम को कहीं विश्राम करना था। शाम हो गई। दूसरा गांव आ गया। आगे जाना मुनासिब न समझा। रात हो जाएगी, यहां ठहर जाएं। आज दूसरे की सेवा लगाई खैरात मांगने की। नमाज़ पढ़ने के पश्चात दूसरा गया है। गांव में कोई मौत हो गई थी और गांव के मुखिया शमशान घाट गए हुए थे। घरों में शोकाकुल स्त्रियां बैठी थीं, बच्चे थे। वापिस आ गया। कुछ मिला? हां, घर-घर में आंसू थे, उदासी थी, यही मिला। मुरशिद कहता है कि ठीक है अब हमने सोना है, अरदास करके सोएं। फिर वही लफज़। जब सोने लगे तो तीनों के मन में गिला, दो दिन से भूखे हैं, क्या नींद आएगी, यह धन्यवाद कर रहा है और हमारा दिल करता है, गालियां निकालें। गिला में मनुष्य रब से दूर चला जाता है।

तीसरे दिन चले हैं। कदम उन तीनों के धीमे हैं क्योंकि रोष ने कमज़ोर कर दिया। परंतु वह मुरशिद बड़े ढंग से चल रहा है, धन्यवाद ने कमज़ोर नहीं होने दिया। जिस दिन तुम्हें समझ आ जाए, धन्यवाद ताज़गी देता है, रोष जन्म को मुरझा देता है और उस दिन ज़ुबान से एक भी गिला नहीं निकलता।

आज तीसरा दिन हुआ है। गांव के बाहर इन फकीरों ने डेरा लगा रखा है। इशा की नमाज़ पढ़ी। आज तीसरे की ड्यूटी लगाई, जा तू मांग ला। गांव में मेला लगा था। सारा गांव इकट्ठा हुआ था वहां। दरवाज़े बंद। यदि किसी घर में कोई एक-आध बैठा भी था तो मेले के इंतज़ार में, तरंग में। आज किसे याद आए कि भिक्षा देना है? ज़्यादा खुशी, ज़्यादा गम मनुष्य को डावांडोल कर देता है। वापिस आ गया। मुरशिद ने रोज़ की तरह आज भी कहा, हाथ जोड़ो। ढंग यह था कि मुरशिद जो शब्द बोलता था, साथ में वे भी बोलते थे। जब मुरशिद कहता है हमारी जो आज की ज़रूरतें थीं तूने बड़े सुंदर ढंग से पूरी कीं। चेले आगे से कहने लगे कि ऐ खुदा! हमारी जो आज तक की ज़रूरतें थीं, तू तीन दिन से नहीं पूरी कर रहा। हमें तो अब भरोसा भी नहीं आता, तू है कि नहीं। मगर पता है, उस फकीर ने क्या कहा? तीन दिन भूखे रह कर आज मुझे पता चला है कि भूख कितनी ज़ालिम

होती है। भूख का ज्ञान भूखे रह कर मिलता था, भरे पेट नहीं मिलता था। हे परमात्मा! ज्ञान देने के लिए तूने तीन दिन हमें भूखे रखा, तेरा धन्यवाद! जिसने गरीबी नहीं देखी, उसके लिए किसी मुफलिस (गरीब) पर तरस खाना बड़ा मुश्किल बात है।

मुरशिद इन तीनों के सिर पर बार-बार हाथ रखता है और कहता है, हे खुदा! शुक्राने में रहने की जाच इन्हें भी सिखा। शुक्राने ही प्रभु के पास ले आते हैं। आप पंक्तियां श्रवण कीजिए :

तिलंग महला ५ घरु ३॥ मिहरवानु साहिबु मिहरवानु॥

वो जो मालिक है, मेहरबान है। हर समय उससे कृपा बरसती है, हर समय उससे दया बरसती है। वह कभी भी कठोर नहीं होता। जैसे सूर्य का स्वभाव ही नहीं है अंधकार में होना, परमात्मा का स्वभाव भी नहीं है कठोरता में होना।

साहिबु मेरा मिहरवानु॥

वह मालिक सदा मेहरबान है तथा सारे जीवों को दान देता है।

जीअ सगल कउ देइ दानु॥ रहाउ॥

अपनी समझ के अनुसार सबकी झोली में डालता है, किसी की झोली खाली नहीं रखता। यदि किसी की झोली दुखों से भरी हुई है तो यह भी उसकी ज़रूरत थी।

केतिआ दूख भूख सद मार॥ एहि भि दाति तेरी दातार॥

(अंग ५)

यह बात अलग है कि धन किसी की ज़रूरत है तथा धन का इस्तेमाल करना किसी-किसी को आता है। किसी-किसी की ज़रूरत है उसे दुख मिलें, लेकिन दुख का इस्तेमाल करना किसी-किसी को आता है। सभी जीवों को तू उनकी आवश्यकतानुसार दान देता है।

तू काहे डोलहि प्राणीआ तुधु राखैगा सिरजणहारु॥

वह जो सृजनहार है सभी की रक्षा करता है। तू क्यों डोलता है?

जिनि पैदाइसि तू कीआ सोई देइ आधारु॥ १॥

जिस अकाल पुरख ने तुझे पैदा किया है जीवन के लिए आधार भी

वही देता है, वही दे रहा है और वही देता रहेगा, तू डोल (डगमगा) न।

जिनि उपाई मेदनी सोई करदा सार॥

जिसने सृष्टि पैदा की है, ख़बर भी वही ले रहा है, रखवाली भी वही कर रहा है।

घटि घटि मालकु दिला का सचा परवदगारु॥२॥

वह हर दिल का मालिक है, प्रत्येक वस्तु का मालिक है तथा वह सच्चा है, सही है और पालन-पोषण करने में समर्थ है।

कुदरति कीम न जाणीऐ वडा वेपरवाहु॥

उसकी की हुई यह कुदरत है। कितनी है? कौन जानता है? यह बेपरवाह है, बहुत बड़ा। उसकी किरत ही इतनी महान है कि नापी-तौली नहीं जा सकती। वह कर्त्ता कितना महान है कौन अंदाज़ा लगाए? वह किसी का मोहताज नहीं।

करि बंदे तू बंदगी जिचरु घटि महि साहु॥ ३॥

जितने तेरे में श्वास हैं तू बंदगी कर। प्रत्येक श्वास शुक्राने में निकले, कभी रोष में न निकले।

तू समरथु अकथु अगोचरु जीउ पिंडु तेरी रासि॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! तू सर्वशक्तिमान है तथा समर्थ है। जिह्वा से तुझे बयान करना बहुत कठिन है। यह शरीर तथा इसमें जीवन यह सब तेरा दिया हुआ दान है, तू ऐसा अकथनीय है।

रहम तेरी सुखु पाइआ सदा नानक की अरदासि॥ ४॥ ३॥

यह जो हर समय तेरी रहमत है, यह मेहरबान होना जो तेरा स्वभाव है, इसलिए नानक को सुख मिले। नानक हर समय सुखी है। धन्यवाद करने वाला यदि बाज़ार में भी बैठा है, गुरुद्वारे में भी बैठा है। रोष करने वाला यदि गुरुद्वारे में भी बैठा है या घर-बार में बैठा है। साहिब रहमत करें! इस तरह की अरदास हमारे भीतर से पैदा हो। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

★★★

गुर कै सबदि भरे भंडारा

धनासरी महला ३॥

हरि नामु धनु निरमलु अति अपारा॥
गुर कै सबदि भरे भंडारा॥
नाम धन बिनु होर सभ बिखु जाणु॥
माइआ मोहि जलै अभिमानु॥१॥
गुरमुखि हरि रसु चाखै कोइ॥
तिसु सदा अनंदु होवै दिनु राती
पूरै भागि परापति होइ॥ रहाउ॥
सबदु दीपकु वरतै तिहु लोइ॥
जो चाखै सो निरमलु होइ॥
निरमल नामि हउमै मलु धोइ॥
साची भगति सदा सुखु होइ॥२॥
जिनि हरि रसु चाखिआ सो हरि जनु लोगु॥
तिसु सदा हरखु नाही कदे सोगु॥
आपि मुकतु अवरा मुकतु करावै॥
हरि नामु जपै हरि ते सुखु पावै॥३॥
बिनु सतिगुर सभ मुई बिललाइ॥
अनदिनु दाझहि साति न पाइ॥
सतिगुरु मिलै सभु त्रिसन बुझाए॥
नानक नामि सांति सुखु पाए॥४॥२॥

(अंग ६६४)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ! सोढी सुलतान धन्य गुरु रामदास महाराज जी का आज प्रकाश उत्सव है। इस सम्बंध में कुछ विचारें आप जी के समक्ष भेंट करूं, इस स्तर पर हुक्मनामे की विचार तथा अर्थ आप जी के सामने रखूं।

मानव-दुनिया पर जो महिमा है वह सारी धन पर खड़ी है। यह बात अलग है कि धन के अनंत रूप माने गए हैं। गऊ-धन, गज-धन, असवर-धन, भूमि-धन, स्वर्ण-धन, रूप-धन, लगभग इस तरह की वस्तुओं को धन कहते हैं। करंसी नहीं थी, ये सिक्के नहीं थे और ये नोट भी नहीं थे तथा भूमि-धन, गऊ-धन, गऊएं-धन थे, असवर-धन, हाथी-धन थे। रूप-धन, मनुष्य के सौंदर्य को भी धन कहते थे। रूप का सिक्का भी चलता था। इसी ढंग से स्वर्ण-धन सोना था। यह धन जिसके पास होता उसे कहते थे धनवान। यह धन्यता के योग्य है, धनवान है। इसके पास रूप का धन है, इसके पास भूमि-धन है, इसके पास असवर-धन है, इसके पास गज-धन है, इसके पास गऊ-धन है, बेरूनी दुनिया में आदि काल से धनवान पूजा जा रहा है, कहीं प्रत्यक्ष स्वरूप में तो कहीं अप्रत्यक्ष स्वरूप में।

धन्य श्री गुरु अमरदास जी महाराज ने इस पावन-पवित्र वाक में बताया है कि यह धन नहीं जिसे आप धन कहते हो। ये मात्र जीवन की ज़रूरतें हैं। इससे न कोई धनवान होता है, न कोई धन्यता के योग्य होता है। ठीक है, सोने के अंबार लग जाएं। अधिक गऊ-धन हो, राज-धन हो, रूप-धन हो, भूमि-धन हो, परंतु यह मनुष्य धनवान नहीं है, क्योंकि यह धन नहीं मात्र ये जीवन की ज़रूरतें हैं। शरीर के तल से निकल कर ये शरीर की ज़रूरतें हैं। जब कोई मनुष्य उसे मन की आवश्यकता बना लेता है तो उसी आवश्यकता का नाम लोभ हो जाता है, उसी को ही लोभ कहते हैं। और लोभ क्या है? आवश्यकता शरीर के तल से उछल कर मन का हिस्सा बन गई है। यह बात अलग है कि गऊ-धन, भूमि-धन, असवर-धन, कंचन-धन, रूप-धन से मन की तृप्ति नहीं होगी, क्योंकि वह मन की आवश्यकता ही नहीं है।

तन की आवश्यकता को मनुष्य आदि काल से मन की आवश्यकता बना रहा है, जबकि मन की पूर्ति होती नहीं। जितनी

ज़मीन-जायदाद इकट्ठी हो जाए, जितना धन इकट्ठा हो, जिस-जिस वस्तु को धन कहा गया है, जिसके पास हो, उसे धनवान कहा गया है, परंतु वे कंगालों से भी दुःखी मिलते हैं। बड़ा हम किसे कहते हैं? जिसके पास यह धन ज़्यादा हो। मगर महाराज कहते हैं कि इस तरह के जो बड़े हैं :

वडे वडे जो दीसहि लोग॥ तिन कउ बिआपै चिंता रोग॥

(अंग १८८)

वे धन प्राप्त करके धनवान नहीं बनते, कंगाल बन जाते हैं, क्योंकि श्री गुरु अमरदास जी महाराज आज के वाक में बताते हैं कि ये धन नहीं है, केवल जीवन की आवश्यकताएं हैं, शरीर की आवश्यकताएं हैं।

आवश्यकताओं का जब कोई संग्रह करता है, जमा भी करता है तथा ज़रूरतमंदों को जब मन का हिस्सा बना लेता है तो उसे लोभ कहते हैं। लोभ मन का बोझ बन जाता है और मानसिक संतुलन, मानसिक तवाजन गंवा बैठता है, संतुलन डांवाडोल हो जाता है। ज़रूरतें सीमित हैं, परंतु लोभ की कोई सीमा नहीं। यह कहीं भी समाप्त नहीं होता। लोभ तो सिकंदर का भी समाप्त नहीं हुआ था, बाकी का कहां से होना है। ज़रूरत की सीमा है।

इस पर दास जो उदाहरण देता है, तुम्हारे सामने रखूं। भूख की सीमा है। मनुष्य दो रोटियां नहीं तो चार खा लेगा, चार नहीं तो चलो आठ ले लेगा, दस खा लेगा, सीमा है। स्वाद की सीमा नहीं है। यह सारा दिन खाता रहेगा और आधे-आधे घंटे बाद खाता रहेगा। चालीस-पचास सज्जन जो दास के साथ चलते हैं, उनमें भी एक-दो ऐसे हैं। कई बार मैंने उन्हें समझाया। हर आधे घंटे बाद उन्हें कुछ न कुछ चाहिए। चीनी लोग हर घंटे बाद कुछ खाते हैं। यह बात अलग है कि उनका खाना तरल है, मगर घंटे बाद मुंह मारने को कुछ चाहिए। रसना का स्वाद चाहिए। क्या शरीर हर घंटे बाद मांगता है? ऐसा नहीं। फिर वह तन की आवश्यकता नहीं रह गई। तन की आवश्यकता को मन की आवश्यकता बना लिया तथा इसी को लोभ कहते हैं। खाने का लोभ हो गया। सारा-सारा दिन ही लंगर के आस-पास घूमते हैं।

हर घंटे बाद चाय पीनी है, हर घंटे बाद कुछ खाना है, हटते ही नहीं।

ज्यो-ज्यों यह शरीर वृद्ध होता है, बुजुर्ग होता है, यह आवश्यकता और कम होती है, भोजन की आवश्यकता कम होती है। स्वाद तो घटता नहीं, स्वाद तो बढ़ता जाता है। बूढ़ा आदमी तो उतना ही खाएगा, जितना जवान खाएगा, बल्कि उससे ज़्यादा खाने लग जाता है। इसी तरीके से जब गऊ-धन, असवर-धन, स्वर्ण-धन या आज की मुद्रा को कह दें, नोटों को कह दें। जो चीज मन की आवश्यकता नहीं उससे मन को तृप्त करेंगे तो नहीं होगा, क्योंकि घर में धन बढ़ता जा रहा है मन में भूख बढ़ती जा रही है, घर में सोना-चांदी बढ़ता जा रहा है, मन में निर्धनता बढ़ती जा रही है। ऐसा क्यों है?

धन, मन की आवश्यकता नहीं। इसे कहीं भूलवश भी मन की ज़रूरत न समझ लेना। यह बात अलग है कि संसार ने इसे मन की ज़रूरत बनाया हुआ है, इसलिए लोभ व्यापक है। महाराज कहते हैं कि मानवी मन पर यदि इस समय कोई राज्य है तो लोभ का ही राज्य है :

लबु पापु दुइ राजा महता कूड़ु होआ सिकदारु॥

(अंग ४६८)

राजा तो लोभ है। यदि लोभ है तो पाप है :

पापा बाझहु होवै नाही

लोभ की पूर्ति बिना पाप के नहीं होगी। आवश्यकताओं की पूर्ति पुन्य के साथ की जा सकती है। सतिगुरों का यह वाक आया है कि आवश्यकताओं की पूर्ति पुन्य के साथ की जा सकती है परंतु लोभ की पूर्ति पुन्य के साथ नहीं होगी, पाप के साथ होगी :

पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई॥

(अंग ४१७)

संसार के सारे धनवान मुझे माफ करेंगे ! जो जितना बड़ा धनवान है वह उतना बड़ा पापी है। अन्न-पानी शरीर की आवश्यकता है, भोजन शरीर की आवश्यकता है। भूख की सीमा है, चाहे किसी को कम

लगती है, चाहे किसी को ज़्यादा लगती है। आवश्यकताएं प्रकृति सब की पूरी करती है :

सभु किछु बहुतो बहुतु उपाइआ॥

(अंग १०४)

महाराज कहते हैं कि सारे संसार में जितना पानी चाहिए बहुत ज़्यादा है, जितना भोजन चाहिए कई गुना ज़्यादा है। सड़ रहा है हमारे देश में अनाज। यह बात अलग है कि कई भूखे भी मर रहे हैं। लाखों टन अनाज सड़ रहा है। जितनी आक्सीजन की आवश्यकता है, कुदरत ने करोड़ों गुना ज़्यादा बनाई है, जितनी हवा चाहिए, अनंत गुना ज़्यादा है। रहने के लिए धरती चाहिए, बेशुमार है। धरती के केवल चौथे भाग पर मानवता रहती है, तीन हिस्से तो खाली पड़े हैं। कहीं दलदल है, कहीं जंगल है, कहीं पहाड़ हैं, कोई नहीं बसता।

भारत से छः गुना ज़्यादा ज़मीन के हिसाब से आस्ट्रेलिया बड़ा है। तीन करोड़ की आबादी है। कुछ भी नहीं। हज़ारों मील तक कोई आबादी नहीं। भारत से चार गुना ज़मीन पर कनाडा बड़ा है। कुल ढाई करोड़ की आबादी, कुछ भी नहीं, सारा खाली पड़ा है। रहने को जितनी धरती चाहिए, बहुत ज़्यादा है। पीने को जितना पानी चाहिए, बहुत ज़्यादा है। फिर गुरबाणी तो ऐसा भी कहती है कि जीव का जन्म बाद में होता है, रिज़्क का जन्म पहले ही हो जाता है :

पहिलो दे तैं रिजकु समाहा॥ पिछो दे तैं जंतु उपाहा॥

(अंग १३०)

पहले रिज़्क पैदा हो जाता है और जीव का जन्म बाद में होता है। इस पर कोई उदाहरण चाहिए, इस पर कोई प्रमाण चाहिए। गुरबाणी के साथ-साथ दुनिया के अन्य विद्वानों के अन्य ख़्याल भी मेल खाते हैं।

एक सूफी फ़कीर का ख़्याल है कि कोई चिंता करनी है, तूने गम करना है तो कर ले, परंतु रोजी का गम, रिज़क का गम बिलकुल न करना। माता के स्तनों में दूध पहले बन गया, बच्चे का जन्म बाद में हुआ। सतिगुरु कहते हैं कि जो ज़रूरतों की खातिर मेहनत कर

रहा है, उस पर भरोसा किया जा सकता है, मगर :

लोभी का वेसाहु न कीजै जे का पारि वसाइ॥

(अंग १४१७)

लोभी पर विश्वास मत करना। वह तो कुछ भी कर सकता है। मगर एक ऐसा धन है जिसका लोभ ही मन को निर्मल कर देता है। आप कहोगे लोभ तो मैला करता है। नहीं, लोभ निर्मल भी कर देता है। किस धन का लोभ मनुष्य को निर्मल कर देता है? जो धन है ही निर्मल उसका लोभ मन को निर्मल कर देता है। और आप कहोगे कि फिर निर्मल धन कौन-सा है? आप अब धन्य गुरु अमरदास जी को श्रवण करें और भावार्थ मैं आप जी के सामने रखूं। फिर आज के सम्बंध में कुछ विचारें आप जी के सामने रखें। एक दफा प्यार से कहो, सतिनामु वाहिगुरु जी।

धनासरी महला ३॥

हरि नामु धनु निरमलु अति अपारा॥

हरि का जो नाम है यही निर्मल है, यही अपार धन है, इंद्रियों की पहुंच से परे है। यही महान धन है जो अपार है। यही एक धन है जो जन्मों-जन्मांतरों की मन की मैल को धो देता है, शुद्ध कर देता है। इस ढंग का कोई संग्रह करे। जैसे धन्य श्री गुरु अरजन देव जी महाराज कहते हैं कि बहुत लोभ है मुझे तेरे नाम सुनने का। करूं क्या? तूने केवल दो ही कान दिए हैं मुझे। इससे मेरे लोभ की पूर्ति नहीं होती :

कोटि करन दीजहि प्रभ प्रीतम हरि गुण सुणीअहि अबिनासी राम॥

(अंग ७८१)

करोड़ों जगहों पर तेरा यश हो रहा है। मैं तो केवल एक ही जगह पर सुन सकता हूं। हे प्रभु! मुझे करोड़ों कान दे ताकि जहां-जहां तेरी सिफतो-सालाह हो रही है, मैं वह भी सुनूं। भाई साहिब भाई गुरदास जी भी कहते हैं कि ये कान बड़े लोभी हैं, बड़े दारिद्री हैं, रजते ही नहीं, हे गुरु! हे प्रभु! तेरी महिमा सुन-सुन कर रजते ही नहीं। यदि कहीं मुझे तू करोड़ों कान दे दे तो हर जगह मैं तेरा यश

सुनूं, जहां-जहां भी होता है, और यह भी लोभ है। धन का लोभ, जिसके भीतर है, बहुत बदकिस्मत मनुष्य है। नाम का लोभ जिसके अंदर पैदा हो गया बहुत खुशकिस्मत मनुष्य है, पूजने योग्य है। परंतु यह लोभ कब पैदा होता है? धन का लोभ शांत हो तो निर्मल ध न का लोभ तब पैदा होता है। जब तक मैले धन का लोभ मौजूद है, निर्मल धन का लोभ पैदा ही नहीं हो सकता। ऐसा कभी हुआ ही नहीं।

साहिब गुरु अमरदास जी फ़रमान कर रहे हैं कि एक ऐसा धन है जिससे मन की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है, मन शांत हो सकता है। यह है प्रभु का नाम। तू गहर-गंभीर है, अति अपार है, इंद्रियों से परे है। यही निर्मल धन है।

गुर कै सबदि भरे भंडारा॥

गुरु के शब्द द्वारा अपने हृदय के भंडार भरे जा सकते हैं। गुरु शब्द द्वारा प्राप्त होगा, विचार द्वारा प्राप्त होगा। गुरु शब्द के जाप के द्वारा प्राप्त होगा। मंत्र भी शब्द को कहते हैं। मंत्र बोल, बोल शब्द, शब्द वाक है। बात एक ही है। गुरु के शब्द द्वारा यह प्राप्त होगा, यह परम धन, यह अपार धन, यह महान धन।

नाम धन बिनु होर सभ बिखु जाणु॥

नाम के धन के बिना अन्य सब कुछ ज़हर जान, विष जान, ज़हरीला जान, मैला जान।

माइआ मोहि जलै अभिमानु॥ १॥

दरअसल वह धन जिसे तू मन की ज़रूरत बना रहा है, इससे तो अभिमान बढ़ जाता है। किसी को रूप का गर्व, किसी को भूमि का गर्व, किसी को धन का गर्व, किसी सो यौवन का गर्व, किसी को प्रभुत्ता का गर्व। यह सब मनुष्य के अंदर अहंकार बढ़ा देगा, गर्व बढ़ा देगा। जिस मनुष्य के अंदर नाम-धन बढ़ता है, नम्रता प्राप्त होती है, गरीबी पैदा होती है। एक तो यह रुचि है कि मुझे सभी जानें। धन की लालसा इसलिए बढ़ती है कि धनवान को फिर सारे जानते हैं, धनवान के इर्द-गिर्द फिर सभी परिक्रमा करते हैं। नाम-धन ज्यों-ज्यों

प्राप्त होता है उसकी इच्छा होती है कि मुझे कोई न जाने। भाई साहिब भाई वीर सिंघ जी कहते हैं कि मुझे छिपे रहने का शौक है। मैं तो छिप जाना चाहता हूं, मैं तो मिट जाना चाहता हूं, मैं तो गुमनाम होना चाहता हूं। मायाधारी मनुष्य यह चाहता है :

नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ॥

(अंग २)

नौ खंडों में मेरे नाम को जाना जाए। यदि कहीं नाम-धन की प्राप्ति हो जाए तो फिर यह होता है :

मो कउ कोइ न जानत कहीअत दासु तुमारा॥

(अंग १००५)

इतना सम्मान तेरे सेवकों का है, चाहे कोई नहीं जानता और दुख भी कोई नहीं, कोई जाने या न जाने। एक ऐसा धन है जो मनुष्य को ख़्याल देता है कि मैं सब कुछ हूं, मैं सब कुछ हूं तथा एक ऐसा धन है जब प्राप्त हो जाए तो ख़्याल बनता है कि मैं कुछ भी नहीं, मैं कुछ भी नहीं। बाहर का धन प्राप्त करके, सब कुछ होकर भी मनुष्य कुछ भी नहीं, परंतु अंदर का धन, यह निर्मल धन, न भी प्राप्त हो, मात्र उसकी तड़प हो तो भी मनुष्य सब कुछ हो जाता है। नाम-धन प्राप्त हो गया तो महा रस है, महा आनंद है, परंतु तड़प बनी हुई है कि प्राप्त नहीं हुआ। यकीन जानो तो भी बहुत कुछ प्राप्त हुआ है। न मिलकर भी बहुत कुछ मिल जाता है। हो सकता है, तुम्हारे में से कोई जो नाम-अभ्यासी हों, ज़रूर उनकी पकड़ में यह बात आ गई होगी कि न मिलकर भी बहुत कुछ मिल जाता है। बाहर से बहुत कुछ मिल कर भी पता चलता है, कुछ भी नहीं। इसलिए मेरे पातशाह कहते हैं कि गुरु के शब्द द्वारा, गुरु-मंत्र द्वारा हृदय के भंडार भक्त-जन भरते हैं। यही सच्चा धन है, यही महान धन है, यही निर्मल धन है।

गुरमुखि हरि रसु चाखै कोइ॥

कोई एक-आध ही गुरमुख है जो हरि-नाम का रस, इस धन का रस खाता, चखता और आनंद लेता है।

तिसु सदा अनंदु होवै दिनु राती पूरै भागि परापति होइ॥ रहाउ॥

पूरे भाग्य से इस निर्मल धन की प्राप्ति होती है और ऐसे मनुष्य को हर वक्त आनंद रहता है, जबकि चोटी के धनवान रोते रहते हैं, चोटी के प्रतिभाशाली मनुष्य रोते रहते हैं। नाम-धन जिसे प्राप्त हो गया, वह सदा आनंद में रहता है, सदा मस्ती में रहता है, मानसिक स्तर का रस सदा उसके अंदर बना रहता है।

सबदु दीपकु वरतै तिहु लोइ॥

शब्द एक ऐसा दीपक है जिसका प्रकाश तीनों लोकों में अर्थात् जिस-जिस के अंदर नाम का प्रकाश हुआ शब्द के कारण हुआ, चाहे किसी धरती पर, किसी द्वीप पर, किसी जगह पर भी हो। यदि कोई प्रभु से जुड़ा है और नाम-धन को प्राप्त किया है तो शब्द द्वारा ही प्राप्त किया है। इसलिए यह ऐसा दीपक है जिसका प्रकाश तीनों लोकों में व्यापक है।

जो चाखै सो निरमलु होइ॥

जो इस रस को चख लेता है, निर्मल हो जाता है। यह निर्मल धन हृदय को निर्मल कर देता है, पावन कर देता है, पवित्र कर देता है।

निरमल नामि हउमै मलु धोइ॥

यह नाम ऐसा निर्मल धन है जो अहंकार को मिटा देता है, मगर बार-बार मनुष्य के अंदर यह ख़्याल पैदा होता है कि मैं कुछ भी नहीं, मैं कुछ भी नहीं, मेरा नाम कोई न जाने।

साची भगति सदा सुखु होइ॥२॥

जो सच्चा परिपूर्ण परमात्मा है, उसकी भक्ति से, उसकी भावना से सदीवी सुख की प्राप्ति होती है, सदीवी आनंद की प्राप्ति होती है।

जिनि हरि रसु चाखिआ सो हरि जनु लोगु॥

जिन्होंने हरि का रस चख लिया है, वे हरि के जन हैं, वही धनवान हैं, वही महान हैं, वही लोग धनवान गिने जाते हैं।

तिसु सदा हरखु नाही कदे सोगु॥

सदीवी उनके मन में मस्ती बनी रहती है, शोक एवं चिंता कभी

भी नहीं आती।

आपि मुकतु अवरा मुकतु करावै॥

बंधनों से मुक्त हो जाता है, स्वयं के तंत्र में जीता है, स्वतंत्र मतलब स्वयं के तंत्र में। अब अपने आप में जीता है किसी के तेज में नहीं, किसी की मोहताजी में नहीं, किसी के दबाव में नहीं, अपनी आत्मा की प्रेरणा के अनुसार जीता है। स्वतंत्र हो जाता है, मुक्त हो जाता है तथा दूसरों को भी मुक्त करता है।

हरि नामु जपै हरि ते सुखु पावै॥३॥

जो-जो सज्जन, जो-जो गुरमुख नाम जपते हैं, सुख की प्राप्ति कर लेते हैं, आनंद की प्राप्ति कर लेते हैं।

बिनु सतिगुर सभ मुई बिललाइ॥

बिना सतिगुर की सेवा के, बिना शब्द के जगत से आध्यात्मिक मौत से समूह कायनात मरी पड़ी है। जगत मर जाता है भाव वह आध्यात्मिक मौत मर जाता है। उसके अंदर दैवी गुण नहीं होते। एक तो मौत शारीरिक है, श्वास नहीं चलते, एक मौत आध्यात्मिक है, कोई गुण नहीं है, सुमिरन नहीं चलता, याद नहीं चलती :

हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ॥ (अंग १२)

हरि को भुला कर गुण खत्म हो जाते हैं, गुण मर जाते हैं। मनुष्य भीतरी स्तर पर मर जाता है। जैसे-जैसे मनुष्य परमात्मा को भुला रहा है, अवगुणहारा होता जा रहा है। गुण तो भूलते जा रहे हैं। प्रभु के नाम-जाप से ही गुण पैदा होते हैं, अनुभव पैदा होता है। इस तरीके से आध्यात्मिक मौत से सारी दुनिया मरी हुई है, गुरु को भुला कर शब्द को भुला कर।

अनदिनु दाझहि साति न पाइ॥

सारी दुनिया दिन-रात तृष्णा की आग में सड़ रही है, शांति कोई नहीं, सकून कोई नहीं।

सतिगुरु मिलै सभु त्रिसन बुझाए॥

यदि सतिगुरु का मिलन हो जाए तो सारी तृष्णा की अग्नि शांत

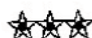
हो और इसे सकून नसीब हो।

नानक नामि सांति सुखु पाए॥

गुरु अमरदास जी महाराज फ़रमान करते हैं कि फिर प्रभु के नाम द्वारा गुरु की ज्यों ही प्राप्ति होती है प्रभु के नाम द्वारा उसे निहचल शांति की प्राप्ति हो जाती है, सकून की प्राप्ति हो जाती है। भूल-चूक की क्षमा! फतह प्रवान करना :

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥

वाहिगुरु जी की फ़तह॥



तेरे चाकरां पा खाक

रागु तिलंग महला १ घरु १

१ओं सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु

अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥

यक अरज गुफतम पेसि तो दर गोस कुन करतार॥

हका कबीर करीम तू बेऐब परवदगार॥१॥

दुनीआ मुकामे फानी तहकीक दिल दानी॥

मम सर मूइ अजराईल गिरफतह दिल हेचि न दानी॥ १॥ रहाउ॥

जन पिसर पदर बिरादरां कस नेस दसतंगीर॥

आखिर बिअफतम कस न दारद चूं सवद तकबीर॥२॥

सब रोज गसतम दर हवा करदेम बदी खिआल॥

गाहे न नेकी कार करदम मम ईं चिनी अहवाल॥३॥

बदबखत हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक॥

नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरां पा खाक॥४॥१॥

(अंग ७२१)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ!

धन्य गुरु नानक देव जी का यह महावाक शुद्ध फारसी में है, परशियन में है। परशियन, फारसी हिंदुस्तानी भाषा नहीं है। ईराक के कुछ शहरों एवं गांवों में परशियन बोली जाती है, समझी जाती है। दुनिया की बड़ी भाषाओं में से यह एक बड़ी भाषा है। दूसरा नुक्ता यह है कि धर्म का ज्यादा ज्ञान भारतीय भाषाओं में लिखा गया है, संस्कृत है, ब्रज भाषा है। धन्य गुरु ग्रंथ साहिब जी के ८० प्रतिशत

जो शब्द हैं इन्हें ब्रज भाषा कहते हैं। जो लिपि है इसे हम गुरमुखी कहते हैं और यह लिपि लगभग २००० वर्ष पुराने जो खंडहर रशिया में मिलते हैं वहां यह लिपि लिखी हुई है। इसे धन्य गुरु नानक देव जी ने अपनाया। इसलिए इसका नाम गुरमुखी पड़ा। फिर आज हम इसे पंजाबी लिपि कहते हैं।

परशियन और हिंदोस्तान की भाषाओं में धार्मिक ज्ञान सबसे बड़ा ज्ञान है। धर्म का मूल ज्ञान भारतीय भाषाओं में है, संस्कृत में है, ब्रज भाषा में हैं। इससे ज्यादा यदि धर्म की गहरी कुछ बातें मिलती हैं तो फारसी में मिलती हैं, क्योंकि ईरान, अफगानिस्तान एक ऐसा देश है जिसने फकीर बहुत ज्यादा पैदा किए हैं। यदि भारत को संतों, गुरुओं, अवतारों की धरती कहते हैं तो ईरान एवं अफगानिस्तान को भी पीरों-फकीरों की धरती कहते हैं। धन्य गुरु नानक देव जी महाराज में एक खूबी थी कि जिस देश में जाते थे, सतिगुरु को पता था इन्होंने मेरे देश की बोली (भाषा) तो समझनी नहीं, इसलिए उसे समझाते थे उसी की भाषा में।

भाषा एक बर्तन है। बर्तन सोने का भी होता है, पीतल का भी होता है, मिट्टी का भी होता है, तांबे का भी होता है। यह भाषा महान है, वह भाषा महान है, व्यर्थ की बातें हैं। प्रश्न यह है कि इस भाषा में परोस कर दिया क्या जा रहा है? गाली अंग्रेजी में भी निकाली जा सकती है, गाली पंजाबी में भी निकाली जा सकती है, गाली हिन्दी में भी निकाली जा सकती है। बर्तनों का क्या है? परमात्मा का ज्ञान किसी भी भाषा में दिया जा सकता है। आज का यह महान वाक शुद्ध फारसी में है। धन्य गुरु नानक देव जी महाराज और धन्य गुरु गोबिंद सिंह जी महाराज संस्कृत, अरबी, फारसी के महा पंडित थे। जापु साहिब संस्कृत, अरबी, फारसी का संगम है। इसीलिए कहते हैं कि मुश्किल है, पढ़ते समय भी कठिनाई है, समझते-समझाते वक्त तो परेशानी है ही। आप श्रवण करो :

रागु तिलंग महला १ घरु १

१ओं सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति
अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥

यह वाक तिलंग राग के अंदर है। यह पहले घर (ताल) में है। पूरा मंगलाचरण मौजूद है। इस्लामी धर्म-ग्रंथ जब लिखे जाते हैं तो उस पर कलमा बड़े रूप या छोटे रूप में होता है। धन्य गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज में कहीं मंगलाचरण छोटे रूप में है, कही पूर्ण रूप में। आदि काल से धार्मिक लोग, ईश्वरीय चिंतक, अवतारी पुरुष जब परमात्मा की बात लिखते रहे हैं, उसका ज्ञान जब लिखित रूप में देते रहे हैं तो मंगलाचरण करते रहे हैं। हमारे देश के जो प्राचीन धार्मिक ग्रंथ हैं उनमें मंगलाचरण मिलता है गणेश का, सरस्वती का, क्योंकि ऐसी उनकी धारणा है कि सिद्धि-दाता गणेश है, बुद्धि-दाता सरस्वती है।

भारत में सबसे बड़ी पूजा और सबसे बड़े त्यौहार हिंदू जगत के सरस्वती पूजन के इर्द-गिर्द घूमते हैं, गणेश की पूजा के इर्द-गिर्द घूमते हैं। तन के लिए सिद्धि चाहिए, पदार्थ चाहिए, धन चाहिए। मन के लिए ज्ञान चाहिए। यदि तन को पदार्थ गणेश से मिल सकते हैं तो मन को ज्ञान सरस्वती से मिल सकता है तो फिर परमात्मा तो कुछ भी नहीं। मन में जानने की भूख है। यह चीज क्यों है? कहां से है? कई बार कोई जानकारी दे रहा हो और बात अधूरी रह जाए तो अगला परेशान होता है कि बात पूरी कर। यह मानसिक भूख है। मनुष्य के अंदर जन्म के साथ-साथ जानने की भी भूख है, पदार्थों की भी भूख है, ज्ञान की भी भूख है। इस प्रकार दो महान देवता और देवी बना दी गई।

रूहे-ज़मीन में सदियों के बाद फिर धन्य गुरु नानक देव जी महाराज ने ईश्वरीय ज्ञान को जन्म दिया और कहा, सिद्धि मिलती है उसी एक ओअंकार से, बुद्धि मिलती है उसी एक ओअंकार से। वही सिद्धि-दाता है, वही बुद्धि-दाता है:

दातै दाति रखी हथि अपणै जिसु भावै तिसु देई॥

(अंग ६०४)

ये दातें न गणेश के पास हैं, न सरस्वती के पास हैं, परिपूर्ण परमात्मा के पास हैं। इसलिए धन्य गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज में मंगल मिलता है और गुरु ग्रंथ साहिब का जो पहला अक्षर है वह

'एक' है। बात 'एक' से आरम्भ की। फिर सारी बाणी इस एक की परिक्रमा करती है। ओअंकार में तीन धुनों का और तीन शब्दों को जोड़ मानते हैं–आकार, पुकार, मकार भाव ओअंकार। ओअंकार को ब्रह्मांड की धुन मानते हैं। इससे सब कुछ हुआ है। इससे उत्पत्ति हुई है, इसी से पालणा चल रही है, इसी से ही नाश होता है, इसी से प्रलय होती है।

उतपति परलउ सबदे होवै॥ (अंग ११७)

किस शब्द से होती है? ओअंकार। यह सत्य-स्वरूप है, टिका हुआ है, नाम है, हस्ती है। कहते हैं इसके साथ तो बच्चा ऊंचा हो गया। नाम कि आसमान पर टांगा गया है। हस्ती बड़ी हो गई है। वह किसी की भी किरत नहीं, कर्त्ता है, किसी का भी बनाया हुआ नहीं, सब कुछ बनाने वाला है :

करणा क्रित हैं॥
अक्रिता क्रित हैं॥ १७८॥

(जापु साहिब)

वह अक्रित है, वह अम्रित है। उसे कोई मिटा नहीं सकता, लेकिन ऐसा कर्त्ता है कि पुरख है। हमेशा कर्त्ता किरत से अलग हो जाता है। बनाने वाला बन हुई चीज़ के अंदर नहीं होता। कुम्हार अलग हो गया, मटका अलग है। वह कर्त्ता है। अपनी किरत में पूरा हुआ है। इसे कलगीधर पातशाह ऐसे बयान करते हैं कि जर्रे से लेकर सूरज तक, चींटी से लेकर हाथी तक वही विराजमान है। वह चींटी में भी है, हाथी में भी है। वह पूरा हुआ है अपनी किरत में। उसके स्वभाव में भय नहीं है, वैर नहीं है।

मनुष्य की पहचान एक तो रूप से होती है, एक उसके स्वभाव से होती है। हो सकता है रूप बड़ा सुंदर हो परंतु स्वभाव बहुत बुरा है। हो सकता है बहुत अच्छा हो मगर स्वभाव बहुत बुरा हो। हो सकता है स्वभाव बहुत अच्छा हो लेकिन रूप बहुत बुरा हो– टांगें भी टेढ़ी, बांहें भी टेढ़ी, कमर भी टेढ़ी, गर्दन भी टेढ़ी। हर जगह से शरीर में वल, कुरूप है। उस ज़माने में दुनिया का सबसे कुरूप मनुष्य अष्टावक्र

था, लेकिन उस ज़माने के स्वभाव के कारण सबसे सुंदर मनुष्य भी। जहां परमात्मा के स्वभाव में भय नहीं है, वैर नहीं है, वहां उसके अस्तित्व में समय भी नहीं है।

शरीर को दौड़ने-भागने के लिए स्थान चाहिए। जगह ही नहीं है मनुष्य कहां बैठेगा? जगह ही नहीं है, कहां काम करेगा, भागेगा, दौड़ेगा? मन भागता है समय में। इसे स्थान की आवश्यकता नहीं है। यहां बैठे-बैठे ही मन दौड़ रहा है। मन समय में दौड़ता है। कौन से समय में दौड़ता है? गुजरे हुए समय की यादों की खोज में चला जाता है, आने वाले समय की चिंता में चला जाता है। मनुष्य कभी चिंता में बैठा है, कभी यादों में डूबा होता है। समय परमात्मा के कारण है, समय के कारण परमात्मा नहीं है। हमें समय ने बनाया है और समय खा भी जाएगा :

काल पाइ ब्रहमा बपु धरा॥
काल पाइ सिव जू अवतरा॥
काल पाइ कर बिसनु प्रकासा॥
सकल काल का कीआ तमासा॥ ७॥

(चौपई साहिब)

सारा संसार काल का तमाशा है। जो समय में बना है, समय मिटा देगा। वह अजन्मा है। *अजनम हैं॥ अबरन हैं॥* जन्मा नहीं है तो फिर कैसे है? 'सैभं' संस्कृत का शब्द है स्वयंभू, अपने आप से प्रकट हुआ है। फिर सारा ज्ञान उसी से आ रहा है। वह जो एक है, वह गुरु है। ज्ञान गुरु है। ज्ञान सारा परमात्मा से आ रहा है। कोई गहर गंभीर कृति किसी कवि की नहीं होती, परमात्मा की होती है। कवि की पकड़ में आ गई, उसके बर्तन में समा गई। कोई ज्ञान मनुष्य का नहीं होता, सब परमात्मा का है। जब कोई कह देता है कि ज्ञान मेरा है, उसी ज्ञान की सीमा बन जाती है। जब कोई कहता है कि ज्ञान परमात्मा से आया है वही असीम हो जाता है। 'प्रसादि', दयालु है, बख़्शिंद है, रहीम है, करुणाकर है। अब आप शब्द श्रवण कीजिए:

यक अरज गुफतम पेसि तो दर गोस कुन करतार॥

इस पंक्ति में अरदास है। की हुई साधना, किया हुआ जप-तप वही सफल है जो मनुष्य को अरदास तक ले जाए। कुछ धर्म तो ऐसे हैं जैसे ईसाई, कि चर्च क्यों जा रहे हो? प्रार्थना करने जा रहे हैं। हमारे में ऐसा नहीं है। कीर्तन सुनने जा रहे हैं, कथा सुनने जा रहे हैं, गुरु के दर्शन करने जा रहे हैं, सेवा करने जा रहे हैं, पुन्य करने जा रहे हैं। यह सब कुछ किया हुआ पुन्य, सुना हुआ कीर्तन, कथा, इसका फल क्या है? भीतर से अरदास का निकलना। वह अरदास फिर व्यर्थ नहीं होती:

बिरथी कदे न होवई जन की अरदासि॥

(अंग ८१९)

यह कब निकलती है? जप कर-कर के निकलती है, कीर्तन सुन-सुन कर निकलती है, कथा सुन-सुन कर निकलती है, पाठ कर-कर के निकलती है, वैसे नहीं निकलेगी। वैसे बहुत अरदासें होती हैं। कोई रस्मी अरदास, दीवान की अरदास। दिल की गहराई से अरदास निकलती है, जप कर-कर के, तप कर-कर के, साधना कर-कर के निकलती है, फिर व्यर्थ भी नहीं जाती:

दिल से जो बात निकलती है, असर रखती है।
पर नहीं ताकते-परवाज़, मगर रखती है।

दिल की गहराई में से जो अरदास निकलती है परमात्मा तक पहुंचती है। हम अरदास करते हैं, परशियन में कहते हैं अरजोई करनी, हिन्दी में कहते हैं प्रार्थना करनी। गुरु नानक साहिब ने एक शब्द को जन्म दिया है अरदास करनी है, हाथ जोड़ कर अरदास करनी है। सतिगुरु कहते हैं, एक मेरी अरजोई है, एक मेरी अरदास है, हे कर्त्ता! यदि तू कान लगाकर सुने। मनुष्य जहां होता है वहीं उसके कान होते हैं। घर में बैठी है मां, कान वहीं पर हैं। जहां हमें सुनाया जा रहा है वहां हमारे कान कोई नहीं। मनुष्य जहां होता है उसकी इंद्रियां भी वहीं होती हैं, उसकी जुबान भी वहीं होती है, उसकी आँखें भी वहीं होती हैं। जहां है वहां से देख सकता है, जहां नहीं है नहीं देख सकता। जहां है सुन सकता है, जहां नहीं है नहीं सुन सकता। परमात्मा तो

व्यापक है। यदि व्यापक है तो उसका सुनना भी व्यापक है। किसी जगह भी अरदास की जा सकती है। उसका देखना भी व्यापक है :

पेखत सुनत सदा है संगे मै मूरख जानिआ दूरी रे॥

(अंग ६१२)

हे प्रभु! तू कान कर भाव सुन! एक विनती है:

हका कबीर करीम तू बेऐब परवदगार॥१॥

परशियन में सत्य को हक कहते हैं, जैसे भाई नंद लाल जी कहते हैं :

हक्क हक्क अंदेश गुर गोबिंद सिंघ
बादशाह दरवेश गुर गोबिंद सिंघ।२५।

हे कलगीधर! आप तो हक हो भाव सच हो। सतिगुरु कहते हैं, हका, हे सच्चे! कबीर कहते हैं बुजुर्ग को, पुराने को। पुरानी चीज़ को कबीर कहते हैं। संत-फकीर को भी कबीर कहते हैं, परमात्मा को भी कबीर कहते हैं। यह कबीर लफज़ फारसी का भी है और अरबी का भी है। हे सच के स्वरूप! हे सबसे बड़े! बख्शिंद है तू। तेरे स्वभाव में दया ही दया है, तेरे स्वभाव में रहमत ही रहमत है। हे पालनहारे! तू निर्विकार है। तू अति निर्मल है और सृष्टि का कर्त्ता है। तू कबीर है। इसी तरह मेरे पातशाह उस परमात्मा की महिमा गायन कर रहे हैं।

दुनीआ मुकामे फानी तहकीक दिल दानी॥

हे प्रभु! मैं अपने दिल को समझाता हूं कि यह संसार फानी है, नाशवान है। तू हका है, जगत तो झूठा है। तू कबीर है, यह सब कुछ तो तुच्छ है। यह जो टिका हुआ जगत दिखाई दे रहा है यह तो मिट जाएगा। हे मेरे दिल! तू ऐसा जान। हे प्रभु! मैं अपने दिल को ऐसा समझ रहा हूं कि सब कुछ नश्वर है। धर्म का, प्रभु का सारा ज्ञान मौत के ज्ञान से आरंभ होता है। लोभ, तृष्णा, अहंकार सब जीवन की लालसा से शुरू होता है। जितनी जीवन की लालसा, उतना अहंकारी, लोभी, तृष्णा में ग्रसित हुआ। जितना मौत का ज्ञान उतना वैरागी, सत्यवादी, आत्मदर्शी। हे मेरे दिल! सच्चा जान, केवल उसे

बड़ा जान केवल उस परिपूर्ण परमात्मा को।

मम सर मूइ अजराईल गिरफतह दिल हेचि न दानी॥१॥ रहाउ॥

हमारे देश में कहते हैं कि मौत का देवता धर्मराज है। इस्लाम में मौत का देवता है इज़राईल। 'मूइ' कहते हैं केशों को। उस धर्मराज ने, उस मौत के देवते ने प्रत्येक के केशों को पकड़ा हुआ है। साहिब कहते हैं कि मेरे केश भी उसके हाथ में हैं। 'मम' भाव मैं। बहुत बड़े गुणों का जिक्र करना है तो गुरु नानक देव जी दूसरों को आगे कर देते हैं, कमज़ोरी का जिक्र करना है, कहीं अवगुणों का जिक्र करना है तो फिर अपने को आगे कर देते हैं :

कहु नानक हम नीच करंमा॥
सरणि परे की राखहु सरमा॥

(अंग ३७८)

दूसरे को नीच कह कर बड़े का उपदेश देना यह तो सारी दुनिया करती है। अपने आप को नीच कह कर उस बड़े की बात जगत की झोली में डालनी यह केवल गुरु नानक के घर की महिमा है। हे मेरे दिल! यह सच करके जान कि उसने सभी के केशों को पकड़ा हुआ है। परंतु किया क्या जाए, दिल नादान है, नहीं समझता। रोज़ साल के साल जन्म-दिन तो मनाए जाता है लेकिन मरन-दिन को तो मानता ही नहीं है। जन्म तो हो गया उसे छोड़, मरने को मान लेकिन यह तो जन्म को मानता है। साहिब कहते हैं कि ऐसा यह नादान दिल है, मानता नहीं।

जन पिसर पदर बिरादरां कस नेस दसतंगीर॥

हिंदी-संस्कृत का 'जन' शब्द हो तो इसके अर्थ बनते हैं आदमी। फारसी का जन शब्द है तो इसके अर्थ बनते हैं स्त्री। साहिब यहां कहते हैं कि स्त्री, पिता, पुत्र यह जो सम्बंधी हैं, जितने भी सामाजिक सम्बंधी हैं, किसी ने तेरी बांह नहीं पकड़नी, किसी ने तेरा सहारा नहीं बनना। एक-एक करके तू देख लेगा कि बेसहारा हो गया मां से, बेसहारा हो गया पिता से, पुत्रों से, भाइयों से, मित्रों से। सभी से बेसहारा होकर यदि तूने उस एक का सहारा पकड़ना है तो शुरू से ही उसका सहारा

पकड़ ले, फिर कभी बेसहारा होगा नहीं। बेसहारा होकर उसका क्या आसरा पकड़ना है पहले ही उसका सहारा पकड़। नहीं रहा कोई तो तेरा सहारा बना हुआ है, क्योंकि सम्बंधी आज है, कल नहीं हैं। लेकिन वह सदीवी है, हका है, वह सच है। जो सदीवी है, उसे मनुष्य सहारा नहीं बनाता और जो संग भी नहीं तथा सदीवी भी नहीं, उनके सहारे बनता है। गुरु अरजन देव जी कहते हैं :

मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु॥

वह मनुष्य चाहे कोई भी है :

देवन कउ एकै भगवानु॥

(अंग २८१)

महाराज कहते हैं कि किसी ने तेरी बांह नहीं पकड़नी।

आखिर बिअफतम कस न दारद चूं सवद तकबीर॥२॥

लेकिन जब इससे रुखसत होगा और तकबीर जनाज़े की नमाज़ जो कब्रिस्तान पर पढ़ते हैं, जैसे हमारे शमशान घाट पर 'कीरतन सोहिला' पढ़ते हैं, ये तकबीर जनाज़े की नमाज़ पढ़ते हैं। आखिर ये तेरे सारे सम्बंधी ज़्यादा से ज़्यादा जनाज़े की नमाज़ पढ़ कर आ जाएंगे। बस, इतना ही कर सकते हैं और कुछ नहीं। तेरा सहारा तेरे अहमाल बनेंगे, तेरा सहारा तेरा जपा हुआ नाम बनेगा। तेरा सहारा वही बनेगा जो सभी का सहारा है, परंतु शर्त है, तूने पकड़ा हो।

भाई साहिब भाई नंद लाल कहते हैं कि तेरे पास हाथ है, उसका दामन पकड़ ले, जिसका दामन कभी छूटता नहीं।

सब रोज गसतम दर हवा करदेम बदी खिआल॥

हे प्रभु! दिन और रात बुरे ख़्यालों में मेरा मन रहता है। केवल ख़्यालों में नहीं, कभी-कभी उन्हें किरत भी देते हैं, बदियां भी करते हैं। कभी-कभी हे प्रभु! यह तन बदियां कर बैठता है। एक नुक्ता याद रखना। चोर के विचारों में चोरी हर समय होती है। किरत में तब प्रकट होती है जब उसे मौका मिल जाए। कठोरता कठोर मनुष्य के विचारों में हर समय होती है, प्रकट तब होती है जब मौका मिल जाए। इसी ढंग से सदाचार, रहमदिली, भाईचारा, मिठास तथा दया संत के अंदर हर समय होती है, लेकिन किरत में तब प्रकट होती

है जहां ज़रूरत पड़ जाए। साहिब कहते हैं कि दिन-रात ख़्यालों में बदी ही बदी। हे प्रभु! मैं इस तरह हूं, मेरा मन ऐसा है। परमात्मा के आगे अपने गुण नहीं रखे जा रहे, अरदास में अवगुण रखे जा रहे हैं।

गाहे न नेकी कार करदम मम ईं चिनी अहवाल॥३॥

नेकियों को तो मैं पकड़ने की कोशिश नहीं करता। हे प्रभु! मेरा हाल क्या होना है? मेरे साथ तू क्या फैसला करेगा?

थरहर कंपै बाला जीउ॥ ना जानउ किआ करसी पीउ॥

(अंग ७९२)

क्योंकि नेकियों को मैं पकड़ने की कोशिश नहीं करता, उन्हें तो मैं हाथ नहीं डालता। हे खुदा! पता नहीं मेरा क्या हाल होना है?

बदबखत हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक॥

नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरां पा खाक॥४॥

हे प्रभु! मैं अच्छी किस्मत वाला भी नहीं हूं। शेख साअदी साहब कहते हैं कि बदबखत कौन है? कहते हैं कि मैं ज्योतिषि तो नहीं लेकिन मैं बता सकता हूं कि बदबखत कौन है?

गर इनसाफ तुरसी बदबखत कस असत।

कौन-सा मनुष्य बदकिस्मत है? कि:

दरगह दसत रंज दीघर कम असत।

जो दूसरे के नुकसान में लाभ देखता है, जो दूसरे की बेइज्जती में इज्जत ढूंढता है, जो दूसरे की ढहती कला में चढ़ती कला ढूंढता है, दूसरों के रोने में हंसी ढूंढता है, यह दुनिया का बदबखत बंदा है, कभी हंस नहीं सकता। इसलिए गुरबाणी का फैसला :

पर का बुरा न राखहु चीत॥

तुम कउ दुखु नही भाई मीत॥

(अंग ३८६)

सतिगुरु यहां कहते हैं कि मैं अच्छी किस्मत वाला नहीं हूं, बदबखत हूं। फिर मैं चुगलखोर भी हूं, जर्रे को पहाड़ बनाता हूं। हे प्रभु! मैं गाफिल भी हूं, सुचेत भी नहीं हूं। तुझे देख सकूं, हे प्रभु!

मेरे पास आंखें भी कोई नहीं। दूसरा, मैं मुंहज़ोर भी हूं। जो मुंह में आता है मैं कह देता हूं। यह नहीं देखता कि मौका क्या है, वातावरण क्या है। नानक की एक अरदास है कि तू नहीं मिलता तो न सही, तेरे दर्शन नहीं तो न सही, परंतु जो तेरे मार्ग पर चलते हैं, तेरे चाकर हैं, उनकी खाक बना दे, उनके चरणों की धूल बना दे। तेरा रहमत भरा हाथ मेरे सिर पर नहीं तो न सही, तेरा मिलना नहीं है तो न सही, लेकिन कम से कम जो तेरे मार्ग पर चलते हैं, जो तेरे सेवक हैं, उनके चरणों की खाक बना दे। इस तरह की अरदास सतिगुरु सभी के अंदर से पैदा करे। साहिब रहमत करें। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥
वाहिगुरु जी की फ़तह॥



सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ

धनासरी महला ५ घरु ८ दुपदे १ओं सतिगुर प्रसादि॥

सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ
सासि सासि समाले॥
इह लोकि परलोकि संगि सहाई
जत कत मोहि रखवाले॥१॥
गुर का बचनु बसै जीअ नाले॥
जलि नही डूबै तसकरु नही लेवै
भाहि न साकै जाले॥१॥ रहाउ॥
निरधन कउ धनु अंधुले कउ टिक
मात दूधु जैसे बाले॥
सागर महि बोहिथु पाइओ हरि नानक
करी क्रिपा किरपाले॥२॥१॥३२॥

(अंग ६७१)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ!

धन्य गुरु अरजन देव जी की बख़्शिशों से भरा हुआ आज का यह पावन पवित्र हुक्मनामा, जिसमें धर्म की जो मूल बात है, बुनियादी बात है, सतिगुरु उसी का जिक्र कर रहे हैं—सिमरन। समूह विश्व के धर्म, वैसे धर्म एक ही है। स्कूल में विद्या तो एक ही है लेकिन स्कूलों की बिल्डिंगें अलग-अलग हैं, स्कूल के प्रिंसीपल अलग-अलग हैं, अध्यापक अलग-अलग हैं। शिक्षा एक ही दी जा रही है—मस्जिद में, मंदिर में, गुरुद्वारे में, चर्च में कि याद करो गुरु को, याद करो प्रभु को, याद करो खुदा को। किसी स्कूल में मुहम्मद साहब पढ़ा रहे हैं,

किसी में हजरत ईसा पढ़ा रहे हैं, किसी में अध्यापक बने बैठे हैं श्रीकृष्ण, श्रीराम तथा किसी जगह पर समझा रहे हैं धन्य गुरु नानक देव जी, धन्य गुरु गोबिंद सिंघ जी। इन सभी का कहना एक ही है कि याद करो, सिमरन करो।

धर्म, बस, इसी मूल बात पर खड़ा है। यह धार्मिक मनुष्य है। बहुत पाठ करता है, दान करता है, पुन्य करता है। यह धार्मिक होने की कोशिश कर रहा है, धार्मिक नहीं है। धार्मिक तो वह है जिसकी याद में परमात्मा है, जिसके सिमरन में परमात्मा है। यह रोज़ गुरुद्वारे आता है, यह मंदिर में पूजा करता है, यह तो पांच वक्त का नमाज़ी है। किसी स्कूल में मुहम्मद साहिब पढ़ा रहे हैं। उन्होंने भी खुदाई इबादत याद पर खड़ी की है। नमाज़ एक साधन है कि वह याद आ जाए, कथा-कीर्तन एक साधन है कि वह याद आ जाए। हज़ार बार तूने सुखमनी साहिब का पाठ किया, क्या एक बार भी तुझे याद आया है परमात्मा? यदि एक सेकेंड भी उसकी याद है तो सारे पाप धुल गए हैं।

इस पर मैं एक उदाहरण दिया करता हूं। यदि कोई मकान एक अंदाज के मुताबिक १०० साल से नहीं खोला गया, दरवाज़े बंद थे, खिड़कियां बंद थीं, रोशनदान बंद थे, मोटे-मोटे पर्दे लगे हुए थे और उसके अंधर अंधेरा था, क्योंकि रोशनी जाने का कोई साधन ही नहीं था। क्या इस १०० साल के अंधेरे को निकालने के लिए १०० साल लगेंगे? तर्क, विचार तो यही कहेगा कि जिस रास्ते पर मैं जितने कदम चल कर आगे पहुंचा हूं, यदि मुझे वापस आना पड़े तो उतने ही कदम चलकर आना पड़ेगा। तार्किक ने कह देना है कि उस मकान में से अंधेरे को बाहर निकालने के लिए कम से कम १०० साल लगेंगे। चाहे १०० साल का अंधेरा है, चाहे हज़ार साल का अंधेरा है, इस अंधेरे को निकालने में समय एक क्षण लगता है। बत्ती जलाई तो दिन। हां, अंधेरे को निकालने का एक ढंग गलत भी हो सकता है, कोई लाठियां ले ले, कोई डंडे ले ले कि निकालें अंधेरे को।

आप के ज्ञात के लिए अर्ज़ करूं, मन के अंधेरे को निकालने के लिए दुनिया में बहुत से भक्त अपने तन को सज़ा भी देते रहे

हैं। सूरदास ने अपनी आंखें निकाल दीं, कहा, इन्होंने मुझे भटकाया है। इस तरह के फकीर भी हुए हैं, जिन्होंने अपनी ज़ुबान ही काट दी-इसने बहुत झूठ बोला है, बहुत कड़वा बोला है, इसने मेरी ज़िंदगी में फीकापन भर दिया है। हमेशा ऐसा होता रहा है। गलती मन की है, सज़ा धार्मिक लोग तन को देते हैं। समाज तथा कानून भी ऐसा करता है। सऊदी अरब में छोटी-छोटी गलतियों पर कोड़े मारे जाते हैं, चोरी करने पर बांह काट दी जाती है। आज भी है। चोरी का ख़्याल तो मन का है और मन ने ही हाथ को हुक्म दिया है कि यह चीज़ उठा ले, लेकिन सज़ा तो हाथ को दी जा रही है, जिसने हुक्म माना है। गलती मन की, सज़ा तन को मिली है।

जेल के अंदर कोड़े मारने से, लम्बी कैदों से कोई कैदी नहीं बदला, उलटा और पक्के मुलज़िम हो जाते हैं। अंदर कैदी एक-दूसरे से पूछते हैं कि तू कितनी बार जेल आया है? कहता है, मैं पहली बार आया हूं। तो कहते हैं कि यह नया खिलाड़ी है, एक ओर करो इसे। हम लोग दसवीं बार आ रहे हैं। वे उस्ताद बन जाते हैं। अपराध तो मन करता है लेकिन सजा तन को दी जा रही है। सिक्ख जगत में भी ऐसा हो रहा है। ज्ञान-इन्द्रियों, कर्म-इन्द्रियों की गलती नहीं है। मन को सज़ा न कानून दे सकता है, न समाज दे सकता है और न ही मनुष्य दे सकता है। हां, मन को बदल सकता है। रूप का चिंतन करते हुए मन भटका था, अब अरूप का चिंतन करे। पदार्थों को देखकर लोभ पैदा हुआ था, भटका था, अब परमात्मा का सिमरन करे। आकार को देखकर इसने गलतियां की थीं, अब निरंकार का चिंतन करे, इससे मन बदल सकता है। कर-कर के थक गए हैं। ऐसे तो मैं सिक्ख जगत में बहुतों को जानता हूं। ऐसे मैंने इस्लामी जगत तथा हिन्दू जगत में भी बहुत देखे हैं। कर-कर के थके नहीं, बेचारे टूट गए हैं, अब नहीं पाठ करते, अब नहीं कथा-कीर्तन सुनते, अब नहीं गुरुद्वारे आते।

इस पर भक्त कबीर ने एक बहुत प्रबल दलील दी है :

कबीर फल लागे फलनि पाकनि लागे आंब॥
जाइ पहूचहि खसम कउ जउ बीचि न खाही कांब॥

(अंग १३७१)

आमों का बगीचा था। बहुत पेड़ हरे-भरे और फूल आए, फल आए। बाग़बान माली बहुत खुश, इतने फूल लगे हैं। इस बार आमों की फसल से मालामाल हो जाएंगे। एक दिन ऐसा हुआ कि जोर से आंधी आई, बड़ी जोर से हवा चली, आधे से भी ज्यादा फल झड़ गए, परंतु फिर भी फल लगे हुए हैं, फिर भी फूल लगे हुए हैं। माली कहता है, कोई नहीं, फिर भी काफी है। यदि यह भी कहीं फलीभूत हो गए, हम लोग मालामाल हो जाएंगे। रब की कृपा, जोर से पानी बरसा और ओले भी साथ में पड़ गए। झड़ गया बहुत सारा फल। उदास तो हुआ है बाग़बान।

गुरु उदास तो हो जाता है कि बहुत मेहनत की है, कितना संघर्ष किया, 'नौ खंड पृथ्वी का भ्रमण, फिर कहीं गरम तवी पर। कोई कुमार्गी कहता है, कहीं ग्वालियर की कैद और कहीं कोई भूतना-बेताला कहता है, कहीं दर-दर की ठोकरें और कहीं बच्चे दीवारों में। मेहनत तो बहुत की कि कोई मनुष्य की ज़िंदगी में रस पैदा हो। रस ही परमात्मा है, बेरस ही संसार है। कीर्तन सुन कर रस तो अपने में से पैदा होगा, बाहर से नहीं आएगा। बड़े-बड़े अवतारी पुरुष दुखी तो हो जाते हैं :

संतन दुख पाए ते दुखी॥ सुख पाए साधुन के सुखी॥

(चौपई साहिब)

इतने ओले पड़ गए, इतनी वर्षा हो गई, झड़ गए। दुखी तो हुआ बागबान लेकिन फिर भी कुछ बचा है तथा धीरे-धीरे अब आम बनने पर आया है। उनमें से आम निकलने लगे। खुश है बागबान, कोई बात नहीं, इसके साथ भी हमारे घाटे की पूर्ति हो जाएगी, चल जाएगा गुजारा। आम पकने पर आए हैं। इतनी गिलहरियां आईं, इतने तोते आए, इतने कौए आए, टूक (काट) कर रख दिया। अब जुड़े हुए तो हैं ये आम पेड़ के साथ, मगर कटे हुए हैं, दागी हैं।

मैं अर्ज़ करूं, किसी की ज़िंदगी में दुखों के तूफान चल पड़ते हैं, आर्थिक या पारिवारिक। बहुत की ज़िंदगी इससे झड़ जाती है:

झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही......॥

(अंग १४२५)

कुछ ऐसे होते हैं जिनकी ज़िंदगी में कोई बहुत बड़ा हादसा हो जाता है, कोई असाध्य रोग हो जाता है। ऐसा शारीरिक रोग जिसका कोई इलाज नहीं। गुरु अरजन देव जी इसका जिक्र भी करते हैं :

असाध रोगु उपजिओ तन भीतरि टरत न काहू टारिओ॥

(अंग १००१)

कोई दवाइयां उसका इलाज नहीं कर सकतीं। ऐसा रोग कि पीड़ा तो बढ़ती जा रही है, इलाज कोई भी नहीं। कष्ट तो बढ़ता जा रहा है, हकीम, वैद्य, डाक्टर कोई नहीं। ऐसा रोग जो जाता ही नहीं। मानुष ज़िंदगी से निराश होकर परमात्मा से भी निराश हो जाता है, टूट जाता है। पता नहीं मैंने कितने देखे इस तरह के। ऐसी ज़ोर की वर्षा हो गई, वो जो फूल आम बनने वाले थे, टूट गए। खुशकिस्मती से हादसों ने तो इन्हें नहीं तोड़ा, तूफानों से तो बच गए, नुकसान आया, शुक्राने में रह गए। कोई अज़ीज सम्बंधी जो प्राणों से प्यारा था, नहीं रहा, समझा लिया अपने मन को। समाज में कोई रुतबा घट गया, बहुत बड़ी बेपती हो गई, समझा लिया।

कवि तुलसीदास कहते हैं–'जस अपजस बिधी हाथ।' यश-अपयश प्रभु के हाथ में है। ऐसा अपयश हो गया, टूट गया। इन सभी हादसों से कोई बच गया तो पकने लगा है, रस आने लग पड़ा, बाणी पढ़ता है रस आने लग पड़ा, कीर्तन सुनता है, रस आने लग पड़ा, कथा करता है रस आने लग पड़ा, संगत में बैठता है रस आने लग पड़ा है, गुरुद्वारे की तरफ चलता है रस आने लग पड़ा है। चाल भी निराली हो जाती है, आध्यात्मिक हो जाती है।

पाव सुहावे जां तउ धिरि जुलदे सीसु सुहावा चरणी॥

(अंग ९६४)

चलते हैं पांव गुरु की तरफ, रस आता है। झुकता है सिर गुरु के आगे रस आता है। सुनता है कथा, रस आता है, पकने लग पड़ा है। कच्चे फलों में रस नहीं आता, पके हुए में आता है। पकने लगा है मगर पूरा पका नहीं। कहीं कुसंगत मिल गई है। है तो कुसंगत ही मगर उसे सतसंग समझ लिया। जैसे आज मैंने सिक्ख जगत में इस

तरह के बहुत देखे जो कहते हैं कि कोई जप-तप की आवश्यकता नहीं, कोई बाणी पढ़ने की आवश्यकता नहीं, तो केवल विचार कैसे पैदा होंगे? कैसे परमात्मा के विचार पैदा होंगे बिना प्रेरणा के, बिना सतसंग के? यदि किसी मनुष्य को कुसंगत मिल जाए, जो थोड़ा सा तार्किक हो, जो बुद्धि की प्रधानता मानता हो। जबकि दिमाग का इतना ही काम है, दरवाज़े तक पहुंचना, घर तक नहीं पहुंचा सकता।

अक्ल एक आखिरी सरहद है। निकल गए परिवार के झमेलों से, निकल गए संसार की मुश्किलों से, निकल गए समाज की कुरीतियों से, गुजर गए लाभ-हानि से, इज्जत-बेइज्जती से। आखिर में अब अपने विचारों से निकलें, अपनी समझ से निकलें। अपनी समझ नहीं पहुंचाएगी परमात्मा तक। अपनी समझ अब यह आखिरी सरहद है, इसे भी लांघ। ठीक है, तू लांघ गया है परिवार के झमेलों से, उनमें नहीं पड़ता तू। अब कोई पारिवारिक बातें तेरे पाठ-पूजा में फर्क नहीं डालतीं, अब सांसारिक उलझनें तेरे अमृत वेले उठने पर कोई मुश्किल नहीं डालतीं, अब संसार के झमेले तेरे जप-तप में फर्क नहीं डालते। इनको तो तू लांघ आया है, अब अपनी अक्ल को भी लांघ।

कहते हैं कि शायद संसार, परिवार तथा अन्य सारी व्यवस्था से भी मनुष्य को इतना मोह न हो जितना अपनी सोच के साथ होता है। यदि अपनी सोच के साथ मोह है तो फिर अपनी सोच पर गर्व है। फिर गुरु के सामने भी कह सकता है, मैं सही हूं। गुरु के सामने तो कहना होता है, हे गुरु! अभी तक यदि आध्यात्मिक रस मुझे नहीं प्राप्त हुआ तो मैं गलत हूं। छब्बीस वर्ष की लम्बी-चौड़ी तपस्या के बाद भी बाबा फरीद कहते हैं :

मुझु अवगन सह नाही दोसु॥

(अंग ७९४)

हे खुदा ! तेरा मिलना नहीं हुआ तो फिर मैं ही गलत हूं तू ठीक है। अपनी अक्ल पर रुक गया और यह रोकती है। कई संघर्षशील मनुष्य होते हैं, उन्हें समाज की उलझनें नहीं रोकतीं। मगर अपनी सोच के सामने तो प्रत्येक मनुष्य कमज़ोर है, मैं ठीक हूं। तू ठीक है तो फिर आत्मिक रस क्यों नहीं? तू ठीक है तो परम प्रकाश क्यों नहीं

है? तू ठीक है तो फिर समाधि क्यों नहीं है? तू ठीक है तो तेरा हृदय निरवैर, निर्मल क्यों नहीं है? तू ठीक है तो तेरे पास दैवी गुणों की दात क्यों नहीं है? तू गलत है। समाज को गलत कह देना, परिवार को गलत कह देना, संसार को गलत कह देना, सारी दुनिया कह रही है। अपने आप को गलत कह देना कभी-कभी कोई आत्मदर्शी भक्त कहता है। इस सम्बंध में भाई गुरदास जी का एक कबित्त गुरुद्वारे में मैं सुना रहा था कि दो ब्राह्मण मुझे रोते हुए मिले। कहते हैं कि किसका पदा है, हमें लिखा दीजिए। यह गुरदास जी कौन हैं? मैंने कहा, ये गुरु-घर के वेद-व्यास हैं। कहने लगे कि वेद-व्यास हैं, लेकिन कहते क्या हैं अपने आप को? मैंने पूछा, ठीक नहीं कह रहे, कहने लगे, इतना ठीक कह रहे हैं कि हमें अपनी गलतियां दिखाई दीं।

भाई गुरदास जी कहते हैं कि हे प्रभु! इस तरह की सुंदरता तो मेरे पास नहीं है। किस रूप को आगे करके मैं तुझे रिझाऊं? मेरी जाति भी ऊंची नहीं है, एक भी गुण नहीं, गुणों से विहीन हूं, ज्ञान से भी विहीन हूं। यह कहीं अतिकथनी न समझ लेना। प्रत्येक वह अभ्यासी, प्रत्येक वह जपीश्वर, प्रत्येक वह तपीश्वर महसूस करता है कि यदि आज तक रस नहीं बना तो मैं गलत हूं। अभी तक समाधि लीन नहीं हुआ, कोई कथा-कीर्तन, गुरबाणी, गुरुद्वारे का दोष नहीं, तू दोषी है। तू अपनी सोच से आगे नहीं जा रहा। तेरी सोच रोके जा रही है। हे गुरु! मेरे ऐसे भाग्य भी कोई नहीं, भाग्य से भी विहीन, तप से भी विहीन, कुल से भी विहीन, गुणों से भी विहीन, ज्ञान से भी विहीन। दूसरी पंक्ति में भाई साहिब कहते हैं कि तुझे देख सकूं, आंखें भी कोई नहीं, तुझे सुन सकूं, मेरे पास कान भी कोई नहीं, मैं अपने बोल तेरे कानों तक पहुंचा सकूं मेरे पास जुबान भी कोई नहीं, हाथ भी कोई नहीं, पैर भी कोई नहीं, लूला भी हूं, लंगड़ा भी हूं। कुछ समझ सकूं असलियत को मेरे पास बुद्धि-बल भी कोई नहीं, प्रीति भी कोई नहीं, मर्यादा भी कोई नहीं, रीति भी कोई नहीं, जीने का ढंग भी कोई नहीं, भावना भी कोई नहीं, श्रद्धा भी कोई नहीं, चित्त याद कर सके इस तरह की याद-शक्ति भी कोई नहीं। कमाल की बात, जो महान ज्ञानी है वह कहता है, मैं ज्ञान से विहीन हूं।

जो गुणों का सागर है, कहता है, मेरे पास कोई गुण नहीं। ऐसा नहीं, पारिवारिक उलझनों, सांसारिक मुश्किलों, आर्थिक परेशानियों को लांघ आया हूं जप-तप करके। है उसके पास बहुत कुछ, कुछ गुण हैं मगर रस नहीं है। रस न होने के कारण उसे सारे गुण, अवगुण दिखाई देते हैं। हे प्रभु! तेरी चरण-शरण कैसे प्राप्त हो? सारे अंग तो तेरे भंग हैं, एक अंग थोड़े न भंग है। कहते हैं, रजनी लाई थी पिंगले को। पिंगला (अपंग) था मगर हाथ तो थे, आंखें तो थीं, कान तो थे, जुबान से बोल तो सकता था। साहिब कहते हैं कि बुद्धि-बल भी कोई नहीं, रीति-रिवाज भी मैं नहीं जानता, कोई गुण नहीं है। यह अवस्था किसकी बनती है? जो देखता है आखिरी हद अक्ल की। कहता है, हे अक्ल! हे समझ! तूने समाज की मुश्किलों से मुझे बचाया है, तूने आर्थिक मुश्किलों के होते मुझे गिरने नहीं दिया, लेकिन दैवी रस तो कोई नहीं, आध्यात्मिक रस तो कोई नहीं, उस परम स्वरूप की झलक तो कोई नहीं।

दुनिया के अवतारी पुरुष क्या कहते हैं? जिस अक्ल को साथ लेकर यहां तक पहुंचा है, यदि सबको छोड़ आया है तो अब इस अक्ल को भी छोड़। इसे एक महान आलम, एक महान शायर इकबाल कहता है :

तेरे सीने में दम है पर दिल नहीं।
अकल तां है पर जज़्बे कोई नहीं।

भावना कोई नहीं :

निकल जाओ अक्ल से आगे कि यह नूर
चिरागे-राह है, मंज़िल नहीं है।

उस मार्ग का दीपक था और तू दीपक की परिक्रमा करने लगा है। घर नहीं है, रास्ते का प्रकाश था, उसके इर्द-गिर्द घूमने लग पड़ा है। बहुत तार्किक मनुष्य अपने तर्क से आगे नहीं जाता, बहुत समझदार मनुष्य अपनी समझ से आगे नहीं जाता। कौन बताए, समझ तुझे परमात्मा के साथ नहीं जोड़ सकती?

आज का यह पावन-पवित्र वाक, जिसमें धन्य गुरु नानक देव

जी महाराज प्रभु-सिमरन की बात कर रहे हैं, उसके सारे ये साधन हैं–कथा, कीर्तन, सेवा। सिमरन फल है। आप कहेंगे सिमरन फल है? हां, सिमरन जोड़ देता है :

तुधु चिति आए महा अनंदा

याद आ गया, महा आनंद बन गया। सिमरन तो महा आनंद है। सिमरन कर रहे हैं, वैसे दुखी हैं, परेशान हो रहे हैं। प्रभु-सिमरन दरबार है। बैठे तो सभी हैं मगर दुखी बैठे हैं :

तू चिति आवहि तेरी मइआ॥

(अंग ३८९)

हे प्रभु! यह तेरी बख़्शिश है यदि तू याद आ जाए। सम्बंध सभी यादों के हैं। कोई बहन-भाई के सम्बंध नहीं होते, कोई मित्रों-पुत्रों के सम्बंध नहीं होते। जो याद आता है वही सम्बंधी है। जो बिलकुल भूल गया वह काहे का सम्बंधी है? भूल गया भाई, चाचा, ताऊ, मित्र, कभी याद नहीं आता। ख़ाक सम्बंधी है, कभी याद तो आता नहीं। ठीक है तू दानी होगा, ज्ञानी होगा, रोज़ का सतसंगी होगा, सेवा करता होगा। नहीं मानते तू सिमरन करता होगा। सिमरन तो फल है। सब कुछ इसलिए करता है कि उसे याद करने लगे। ज्यों ही याद करता है :

तुधु चिति आए महा अनंदा जिसु विसरहि सो मरि जाए॥

(अंग ७४९)

उसे भूल जाने से मर जाता है। क्या? मनुष्य के गुण मर जाते हैं, मनुष्य की खुशियां मर जाती हैं, मनुष्य की मस्ती मर जाती है, मनुष्य की सूझ भी मर जाती है। उसे भूलते ही जो आसरे बने होते हैं, सबके आसरे हो जाते हैं।

हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ॥ (अंग १२)

सारे गुण गल गए हैं। यदि वह याद आ गया तो सब कुछ प्राप्त हो गया। इस पावन-पवित्र वाक में छोटा मूल-मंत्र है। वह एक है। उससे उत्पत्ति, पालणा तथा नाश हो रहा है। ओअंकार है, सत्य-स्वरूप है और ज्ञान-स्वरूप है तथा कृपा का सागर है। सब कुछ उसी से आ

रहा है।

धनासरी महला ५ घरु ८ दुपदे १ओं सतिगुर प्रसादि॥

सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ सासि सासि समाले॥

सिमरन करो, याद करो। क्या होगा? सुख की प्राप्ति करो। परंतु सिमरन कैसे करें? अरम्भता–*सासि सासि समाले॥* दुनिया के सारे मंत्र एक ही श्वास में पूरे हो जाते हैं। वाहिगुरु, एक ही श्वास लगा है। राम, एक ही श्वास लगा है, अल्लाह हू, एक ही श्वास लगा है। एक ढंग है, श्वासों की माला है और कोई सिमरना नहीं होता। सिमरना तो तुझे दे दिया है परमात्मा ने, चल रहा है। माला तो चल रही है, याद नहीं चलती, जप नहीं चल रहा, सिमरन नहीं चल रहा। श्वास-ग्रास तो चल रहे हैं, जप नहीं चलता। जब भी बैठें, आरम्भता यही है, एक श्वास में पूरा कर दिया कर तथा जब वाहिगुरु कहे, इसी को सुन ताकि अंदर जाए। भोजन अंदर नहीं गया तो खून कैसे बनेगा? शब्द अंदर नहीं गया तो समाधि कैसे बनेगी? इस प्रकार श्वास-श्वास में उसे याद कर।

इह लोकि परलोकि संगि सहाई जत कत मोहि रखवाले॥१॥

यह ऐसी दौलत है कि इस लोक में भी सहायक है, परलोक में भी सहायक है। सोना, चांदी, धन इस लोक में सहायक है, परंतु परलोक में नहीं है। कुछ व्यक्ति की कठिनाइयां दूर हो जाती हैं इसके साथ, परलोक की नहीं। प्रभु का नाम ऐसी दौलत है, लोक-परलोक में सहायी होती है। इकट्ठी कर लेना नहीं तो शर्मसार होगा।

गुर का बचनु बसै जीअ नाले॥

कोई जेब में से धन निकाल सकता है परंतु हृदय में गुरु का वचन बसा कैसे कोई निकाल सकता है? नहीं निकाल सकता। चोर के हाथ नहीं पहुंचते। साहिब कहते हैं कि गुरु का वचन, गुरु का शब्द जीव के साथ बसता है, मन में बसता है :

जलि नही डूबै तसकरु नही लेवै भाहि न साकै जाले॥१॥ रहाउ॥

जिस मनुष्य का सब कुछ बाहर पड़ा है, खतरे में है, वह कभी सुख की नींद नहीं सो सकता। पानी का डर होगा, आग का डर होगा,

चोर का डर होगा। बाहर का धन है, उस धन से कुछ धर्म नहीं कमाया तो फिर उसके भागीदार शेष तीन और हैं। कौन से? चोर, त्रिप, आग। आग जला देगी, कहीं पानी में डूब जाएगा, कहीं चोर ले जाएगा। तूने धर्म के मार्ग पर खर्च ही नहीं किया। धर्म का हिस्सा भी अब बीच में जोड़ दिया तो फिर आग जलाएगी, चोर ले जाएगा, लेकिन परिपूर्ण परमात्मा का ऐसा धन है न पानी डुबो सकता है, न अग्नि जला सकती है और न चोर चुरा सकता है।

निरधन कउ धनु अंधुले कउ टिक मात दूधु जैसे बाले॥

लेकिन ज़्यादा सिमरन ऐसा है जैसे निर्धन को धन मिल जाए तो सुखी हो जाते हैं, जैसे अंधे को लकड़ी मिल जाती है, जैसे रोते हुए बच्चे को मां का दूध मिल गया है। इसी तरह यह प्रभु का नाम सहारा है, टेक है। इस तरह का है प्रभु का नाम-रक्षक।

सागर महि बोहिथु पाइओ हरि नानक
करी क्रिपा किरपाले॥२॥१॥३२॥

सिमरन की दात ऐसी है जैसे गहरे सागर में किसी को बोहिथ मिल गया है, जहाज मिल गया है तथा बड़े सुख के ढंग से पार हो गया है। प्रभु के नाम का सदका न संसार की मुश्किलें, न परिवार की मुश्किलें, न दुनियावी मुश्किलें उस पर आ सकती हैं और वह स्वतः भवसागर से पार हो जाता है। साहिब रहमत करें। यह दात हमारी झोली में डालें। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥
वाहिगुरु जी की फ़तह॥



जिउ हरि भावै तिउ रखीऐ

सूही महला ४॥

कीता करणा सरब रजाई
किछु कीचै जे करि सकीऐ॥
आपणा कीता किछू न होवै
जिउ हरि भावै तिउ रखीऐ॥१॥
मेरे हरि जीउ सभु को तेरै वसि॥
असा जोरु नाही जे किछु करि हम साकह
जिउ भावै तिवै बखसि॥ १॥ रहाउ॥
सभु जीउ पिंडु दीआ तुधु आपे
तुधु आपे कारै लाइआ॥
जेहा तूं हुकमु करहि तेहे को करम कमावै
जेहा तुधु धुरि लिखि पाइआ॥२॥
पंच ततु करि तुधु स्रिसटि सभ साजी
कोई छेवा करिउ जे किछु कीता होवै॥
इकना सतिगुरु मेलि तूं बुझावहि
इकि मनमुखि करहि सि रोवै॥३॥
हरि की वडिआई हउ आखि न साका
हउ मूरखु मुगधु नीचाणु॥
जन नानक कउ हरि बखसि लै मेरे सुआमी
सरणागति पइआ अजाणु॥४॥

(अंग ७३६)

गुरु-रूप साधसंगत जी! सनिम्र फ़तह कबूल करनी:

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सूही राग में धन्य गुरु रामदास जी महाराज का ऐसा महावाक है, लगभग जिसे हर मनुष्य समझना चाहता है तथा हर मनुष्य की समस्या है, चाहे वह भौतिकवादी है, चाहे वह आध्यात्मवादी है। यह समस्या तो है उसकी ज़िंदगी में। समस्या क्या है? दुख है। चाहे भौतिकवादी है, दुख तो है। दुख की बातें दोनों करते हैं। भौतिकवादी भी कहता है कि विकास तो बहुत किया लेकिन दुख तो है। तत्व की सूझ तथा समझ भी प्राप्त हुई, लेकिन दुख तो है। बस, यही एक समस्या है।

भौतिकवादी ने बाहर से तो कोशिश की है उस दुख को मिटाने की। उसने ऐसा सोचा है कि दुख इसलिए है कि जो कुछ चाहिए वह नहीं है। यदि वह हो जाए तो सुख हो जाए। आध्यात्मवादी ने जो कुछ नहीं है, हो जाए, इसकी चिंता ही नहीं की। जो मैं हूं, वह प्रकट हो जाए। उम्मीद है पकड़ में आ गई होगी यह बात। जो मेरा मूल है, वह प्रकट हो जाए, जो मेरी बुनियाद है वह मेरे सामने आ जाए। इस प्रकार आदि काल से दोनों यत्नशील रहे हैं।

देखते हैं कि भौतिकवादी ने बहुत उन्नति की है। शायद इतनी आध्यात्मवादी ने नहीं की, जितनी एक साइंटिस्ट ने, विज्ञान ने मनुष्य की दुनियावी ज़रूरतों की पूर्ति कर दी है। आध्यात्मवादी उतनी आत्म-तत्व की खोज नहीं कर सका और इतने रंग में रंगे हुओं के दर्शन भी कोई नहीं। विज्ञान ने जो कुछ दिया है उसे ज्ञानवान भी इस्तेमाल करते हैं, जैसे माइक्रोफोन है। यह भौतिकवादी की देन है, किसी आध्यात्मवादी की नहीं। ये पंखे हैं, ये कैमरे चल रहे हैं, रेडियो तथा टी.वी. है, सब भौतिकवादी की देन है।

भौतिकवादी ने देखा कि दिन भर मैं चलूं रुके बिना, ज़्यादा से ज़्यादा २० मील, ३० मील चल सकूंगा। सुबह से लेकर शाम तक उसने अपने पैरों की गति का विकास किया। मोटर बनाकर, रेलगाड़ी बनाकर, फिर हवाई जहाज बनाकर इन्होंने मनुष्य के पैरों की गति

बढ़ा दी। २४ घंटों में सारी दुनिया की परिक्रमा की जा सकती है। आवाज़ से भी तीखे हवाई जहाज भौतिकवादी की देन है। इसी तरीके से मनुष्य कितना भी ऊंचा बोले, अपनी आवाज़ को, अपनी ध्वनि को एक फरलांग से आगे नहीं फेंक सकता था। पूरा चीख कर बोले, पूरा चिल्ला कर बोले, पूरी ताकत लगा कर बोले तो भी उसकी ध्वनि, उसकी आवाज़ एक फरलांग से आगे नहीं जानी थी, लेकिन आज टेलीफोन पर एक देश में कोई बोल रहा है तो पांच-पांच हज़ार मील की दूरी पर दूसरा कोई सुनता है। आवाज़ को इतनी गति दी भौतिकवादी ने। तू दस हज़ार मील की दूरी से भी पुत्र की, मित्र की, किसी की भी आवाज़ सुन सकता है।

आंखें कितना ही देखें लेकिन देखने की सीमा है और बहुत छोटी सीमा है। ख़ुर्दबीन बना कर मनुष्य बारीक से बारीक चीज़ को देखने में समर्थ हुआ। दूरबीन बनाकर मनुष्य दूर से दूर को देखने में समर्थ हुआ। बढ़ गई आंखों की शक्ति, बढ़ गई कानों की शक्ति, बढ़ गई ज़ुबान की शक्ति, बढ़ गई पैरों की शक्ति। दिन भर मनुष्य के हाथ कुछ करें। जैसे हाथों से ही कपड़ा बुना जाता था किसी वक्त, आज आटोमेटिक मशीनें, स्वचालित मशीनें, हज़ारों हाथों का काम एक मशीन कर रही है। भौतिकवादी ने मनुष्य के हाथों की शक्ति को बढ़ा दिया है, पैरों की गति को बढ़ा दिया और स्रोत भी बढ़ा दिए।

इतनी ही शक्तियों के समूह के कारण यह जो ख़्याल था कि दुख इसलिए है कि मनुष्य की ज़रूरतों की पूर्ति नहीं हुई, जो अच्छे से अच्छा मकान अमेरिका में हर मनुष्य को प्राप्त हो गया, अच्छे से अच्छे कपड़े पहनने को मिल गए, अच्छे से अच्छा पकवान-भोजन उपलब्ध है। ऐसा तो कुछ भी नहीं कि जिस वस्तु की ज़रूरत हो वह न हो। एक जगह से दूसरी जगह जाते समय सुंदर-सुंदर मोटरकारें। सोचा था इन भौतिकवादियों ने कि इस यत्न के साथ, इस मेहनत के साथ हम मनुष्य को सुखी कर सकेंगे और आप सुनकर हैरान होंगे कि दुनिया का सबसे सम्पन्न देश अमेरिका है, लेकिन दुनिया का सबसे दुखी देश भी अमेरिका है। क्योंकि जितनी आत्म-हत्या वहां होती है दूसरे देशों में नहीं होती। कितने लोग नींद न आने के शिकार हैं।

एक अनुमान के अनुसार ५० प्रतिशत लोग रात को नींद की गोलियां खाकर सोते हैं और स्वयं साइंटिस्ट कहने लग पड़े हैं कि ऐसा समय आने वाला है जबकि नींद के लिए प्रत्येक को गोलियां खानी पड़ेंगी, हर प्रत्येक अमेरिकन को। नींद खो गई। नींद क्या है? तन का विश्राम। समाधि क्या है? मन का विश्राम। जहां तन का विश्राम खो गया हो वहां मन का विश्राम कहां है।

मनु मेरो धावन ते छूटिओ करि बैठो बिसरामु॥

(अंग ११८६)

सतिगुरु कहते हैं, मेरा मन विश्राम में चला गया। मन के विश्राम को समाधि कहते हैं। अब नींद तो गोलियों से लाई जा सकती है, समाधि गोलियों से नहीं आने वाली। किसी भी गोली के साथ, किसी भी औषधि के साथ मनुष्य समाधिलीन नहीं किया जा सकता। हां, मन का शरीर से वक्ती (सामयिक) सम्बंध तोड़ कर, सुन्न करके नींद लाई जा सकती है।

दो-तीन हज़ार वर्ष पहले भारत के जो अच्छे चिंतक थे, जैसे यूरोप पश्चिम के अच्छे चिंतक साइंटिस्ट कहलाते थे, इस देश के अच्छे चिंतक ऋषि-मुनि, संत, महापुरुष, ब्रह्मज्ञानी कहलाए। इन्होंने कहा, मूल की चिंता करो। छोड़ो, अब आध्यात्मिक आनंद की तलाश करो, अपने आप की खोज करो। बाकी कुछ भी खोजने की आवश्यकता नहीं। तू कौन है, अपनी वास्तविकता ढूंढने की कोशिश करो और कुछ ढूंढने की ज़रूरत ही नहीं। वो जो वास्तविकता है, उसी को उन्होंने 'धर्म' कहा। आवश्यकता है धर्म की, धन की नहीं, आवश्यकता है परमात्मा की, पदार्थ की नहीं। लेकिन तन का पदार्थ चाहिए, तो इन्होंने ऐलानिया कह दिया, कोई आवश्यकता नहीं अच्छे मकानों की। पहाड़ों के बीच में रह जाएंगे, पेड़ों के नीचे रात काट लेंगे, कोई आवश्यकता नहीं अच्छे भोजन की, कंद-मूल खा लेंगे, पेड़ों के पत्ते खा लेंगे, दरियाओं का पानी पी लेंगे, झीलों का पानी पी लेंगे, किसी प्रकार की सांसारिक कोई ज़रूरत ही नहीं। ज़रूरतों को सीमित कितना भी किया जाए फिर भी कुछ ज़रूरतें हैं। सीमित तो किया नहीं। चाहिए पहनने को कपड़े। यदि पशु नंगे हैं तो क्या हुआ हम भी नंगे रह

लेंगे। दिगंबर जैन साधू, नांगे साधू आज भी हमारे देश में मौजूद हैं। हज़ारों की संख्या में आज भी इस देश में मौजूद हैं।

जैन धर्म का दिगबंर साधू भी कपड़े नहीं पहनता। आसमान ही जिसका कपड़ा है। अम्बर कपड़े को कहते हैं। दिगंबर—दैवी कपड़े। कोई ज़रूरत नहीं इन कपड़ों की और बाकायदा जो मंदिर हैं जैनियों के, उन पर साफ लिखा होता है—जैन मंदिर, दिगंबर जैन मंदिर। ये मुंह पर सफेद कपड़ा बांधते हैं, सफेद कपड़े पहनते हैं, सफेद धोती से अपना तन लपेटते हैं। दिगंबर बिलकुल नंगे रहते हैं। ये खुद को सिरमौर मानते हैं। हमने इतनी ज़रूरत घटा ली है कि कपड़े भी नहीं चाहिए। हर वक्त पेड़ फल नहीं देते और हर वक्त भूख तो लगती है। फिर क्या करें? पेड़ों को फल तो साल में एक बार लगता है। वह भी महीना-पंद्रह दिन ढूंढेंगे। फिर क्या करें?

महात्मा बुद्ध जैसों ने, गोरखनाथ जैसों ने, स्वामी महावीर जैसों ने कहा, भिक्षा मांग लेंगे। महात्मा बुद्ध ने बहुत भिक्षु पैदा किए। महावीर ने भिक्षु पैदा किए और गोरख ने भिक्षु पैदा किए मांगने को। मांग कर खा लेंगे। है एक यह भी धर्म, परंतु सामूहिक धर्म नहीं है, सभी का धर्म नहीं है। मैंने बौद्ध सम्मेलनों में ये लफज़ कहे। महात्मा बुद्ध का धर्म भी धर्म है लेकिन सामूहिक धर्म नहीं है, क्योंकि यदि सारे ही भिक्षु बन जाएं तो सामूहिक धर्म है। सारे की भिक्षु बन जाएं तो कौन देगा? फिर देगा कौन? किसी ने नहीं देना। इसलिए जितने भिक्षु होंगे, उससे कई गुना देने वाले भी चाहिए। फिर देने वाले तो किरती होंगे, मेहनती होंगे, गृहस्थी होंगे। एक भिक्षु की पालणा करने के लिए दस-बीस गृहस्थी तो चाहिए।

ठीक है महावीर का धर्म भी एक धर्म है। प्रभु-प्राप्ति का एक साधन है, लेकिन यह सामूहिक धर्म नहीं है, कतई नहीं है। महावीर की तरह सभी गृहस्थ के त्यागी हो जाएं और भिक्षा मांग कर गुजारा करें तो तीन सौ साल के बाद यह धरती मनुष्यों से खाली हो जाएगी, केवल पशु ही रह जाएंगे, क्योंकि वे प्रकृति के नियम को तो मानते हैं। मनुष्य प्रकृति के नियम से इंकार कर सकता है। तीन सौ वर्षों के बाद कोई मनुष्य दिखाई नहीं देगा।

क्यों महावीर ने कहा कि गृहस्थ बंधन है? तोड़ो इस बंधन को, भिक्षा मांगो। फिर प्रश्न खड़ा होता है कि कोई देने वाला ही नहीं तो भिक्षा कहां से लूं मैं? और यदि सारे ही गृहस्थ का त्याग कर दें तो तीन सौ वर्षों के बाद कोई मनुष्य दिखाई ही नहीं देगा। यह सामूहिक धर्म नहीं है, यह सारी दुनिया का धर्म नहीं है, कुछ व्यक्तियों का धर्म है, कुछ आदमियों का धर्म है। उनको मानने वाले सुस्त होते गए।

भारत अंदाज़न एक हज़ार वर्ष से ही लम्बी गुलामी में रहा और गरीबी में जीवन व्यतीत कर रहा है। उसमें विदेशों की लूट-खसूट रही, क्योंकि अफ़गानियों ने लूटा, मंगोल आए, फ्रेंच आए, पुर्तगेज़ी आए, अंग्रेज़ आए। लेकिन मूल रूप में इस देश की गरीबी का एक और भी कारण है, वह है कुछ नहीं करना, भिक्षा मांगना, मांग कर खाना। इससे क्या हुआ? थोड़ा-सा आत्म-रस किसी को आया भी तो दुनिया की ज़रूरतों की पूर्ति न होने के कारण। तन दुखी। भोजन का मनुष्य त्याग कर सकता है, भूख का नहीं। भूख का कैसे त्याग करे? दुख इस देश में भी बना। इतने साधुओं के होते हुए, इतने संतों के होते हुए, इतने ऋषि-मुनियों के होते हुए यह देश दुखी है, गरीब है और इसकी गरीबी का एक कारण है मांग कर खाना। आवश्यकता है इस बीज को फल तक पहुंचाने के लिए धरती की, आवश्यकता है इस बीज को फल तक पहुंचाने के लिए पानी की और साधनों की। भारत ने बीज की तो चिंता की मगर ज़मीन की चिंता न की, पानी की चिंता न की, खाद की चिंता न की। अमेरिका ने या यूरोप ने, पश्चिम ने ज़मीन की चिंता न की। बहुत बढ़िया बना दी और बीज की जगह कंकड़ बोए, पत्थर बोए या सड़े हुए बीज बोए। सुख वहां भी न पैदा हो सका, सुख यहां भी न पैदा हो सका। हार गया भौतिकवादी और हार गया आध्यात्मवादी। इस देश में आध्यात्मवादी से विश्वास टूट गया, आज जितनी श्रद्धा नहीं रही उन आध्यात्मवादियों पर।

इस देश में अवतारी पुरुषों से विश्वास टूट गया या टूटता जा रहा है, लेकिन पश्चिम में साइंटिस्ट भौतिकवाद पर से भी विश्वास टूट गया और अब क्या है? अमेरिका योगियों के पीछे चल कर मन

की शांति ढूंढ रहा है, हिन्दोस्तानी अमेरिका भाग कर तन की आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन ढूंढ रहा है। एक की निगाह भारत पर, एक की निगाह अमेरिका पर। मैं अर्ज़ करूं, पहले गलती जो भारत की थी उस गलती को तो छोड़ दिया है, जो गलती पश्चिम ने की उस गलती को पकड़ लिया है और जो गलती भारत ने की उसे यूरोप ने पकड़ लिया, पश्चिम ने पकड़ लिया। एक ने बीज की चिंता की, एक ने धरती की चिंता की। फल दोनों के पास नहीं।

इस देश ने बीज की तो चिंता की और कुछ आध्यात्मवादियों ने बीज बहुत सुंदर, अच्छे भी बनाए, लेकिन कोई एक-आध महा योगी, कोई एक-आध महान भिक्षु, कोई एक-आध महान सन्यासी, बाकी तो सारे ऐसे भी हैं।

धन्य गुरु रामदास जी महाराज कहते हैं कि तन परमात्मा ने बनाया है। इसके भी कुछ नियम हैं। मन प्रभु ने बनाया, तूने नहीं बनाया, इसके भी कुछ नियम हैं। उसी नियम को समझना और उसी नियम के मुताबिक तन तथा मन को चलाना। इसे कहते हैं धर्म के अनुकूल चलना। और क्या होता है धर्म के अनुकूल चलना? और क्या होता है धर्म को मानना?

नियम क्या बनाए हैं उस परमात्मा ने। मनुष्य जब कोई एक कर्म करता है तो कर्म करने की छूट है, बिलकुल छूट है। सागर में मछली जहां जाए, जा सकती है। दाईं तरफ जाए, बायीं तरफ जाए, पूरब को जाए, पश्चिम को जाए, उसकी मर्ज़ी है। बहुत बड़ा सागर है, ज़मीन से तीन गुना बड़ा है और मछली यह कहे कि मैंने सागर से बाहर निकल कर चलना है, ज़मीन पर चलना है, सागर में नहीं। अब इसी कोशिश में मछली मर तो जाएगी, जमीन पर नहीं चल सकेगी। ऐसी प्रकृति नहीं है, ऐसा परमात्मा ने नियम नहीं बनाया, लेकिन सागर में दाएं-बाएं जा सकती है। यदि कहे कि मैंने सागर के किनारों को छूना ही नहीं, बल्कि किनारों पर सागर त्याग कर मैंने ज़मीन पर चलना है तो अब कौन बताए कि धर्म ही नहीं है। यह मर्यादा ही नहीं है, यह परमात्मा का नियम ही नहीं है। हो सकता है यदि पूरी ताकत लगाए, पूरी कोशिश करे, एक फुट-दो फुट तक रींग जाए, लेकिन

मर जाएगी। जब भी मनुष्य के हाथ कुछ करें तो उसमें मन शामिल हो। शरीर कुछ कर रहा है और उसमें मन शामिल नहीं तो उस किए हुए कर्म के संस्कार नहीं बनेंगे। ज्यों-ज्यों एक ही कर्म, उसमें मन शामिल है और शरीर करता जा रहा है तो संस्कारों का संग्रह होता जा रहा है। यही संस्कारों का मोह बन कर मनुष्य का स्वभाव बन जाता है।

कर्म बदले जा सकते हैं, संस्कार बदले जा सकते हैं स्वभाव नहीं बदला जा सकता। मैं हाथ जोड़ूं और ज़ालिम अपने कदम फिर भी न रोके तथा मज़लूम को अपने पैरों के नीचे कुचलता जाए। बार-बार उस कर्म को दोहराया गया, रिपीट किया गया और संस्कार बन गए। चलते रहे कर्म, संग्रह होता रहा संस्कारों का। यही स्वभाव बन जाता है मनुष्य के कर्म बदलते हैं। सतसंग मनुष्य के संस्कारों को बदलता है, लेकिन बार-बार जब किए कर्म और संस्कार स्वभाव बन जाते हैं तो ऐसे मनुष्यों के सामने अवतार भी असफल हो जाते हैं। अवतारों ने क्या उनका स्वभाव बदलना है? अवतारों को सूली पर टांग कर रख देते हैं।

आप कहोगे, सज्जन ठग के स्वभाव को गुरु नानक ने बदला। यह भी नुक्ता रख दूं। वैसे तो ठग हम कहते हैं, गुरु नानक ने कहीं उसे ठग नहीं कहा, सज्जन करके ही बुलाया। इसने धर्मसाल भी बनाई हुई थी, मस्जिद भी बनाई हुई थी, हिंदू-मुस्लिम दोनों यात्रियों का ख़्याल रखता था। पहले परोपकार की भावना से यह बनाया था। एक दिन ऐसे मुसाफिर आ गए जिनके पास सोने की अशर्फियां बहुत थीं। अब यह ब्रह्मज्ञानी तो है नहीं था, परोपकारी था, कोई संत तो है नहीं था, सेवा करने वाला था। अभी सेवा कर रहा था, अभी इसकी सेवा संतपुने तक नहीं थी पहुंची। धन को देखकर लालच आ गया कि यह सारी सोने की अशर्फियां मेरे पास हों, मगर कैसे हों? या तो उसे धोखा दिया जाए या उसे मारा जाए। मारा, लेकिन दिन भर पश्चाताप भी करता रहा। यह क्या कर बैठा? मस्जिद बनाई, धर्मसाल बनाई। यह मैंने क्या किया? पश्चाताप का मतलब है कत्ल करना। कर्म है, संस्कार है, स्वभाव नहीं है। चोरी करके पश्चाताप पहले हो। चोरी कर्म है,

संस्कार है, स्वभाव नहीं है। दुराचार करके बार-बार मन पश्चाताप करे, कर्म है, संस्कार है, स्वभाव नहीं। स्वभाव कैसे बनता है, बार-बार वह कर्म किया जाए और संस्कारों का इकट्ठ हो जाए, उन्हीं संस्कारों का।

अब आपको गुरु नानक देव जी का एक वाक सुणा लूं, फिर मैं आगे चलूं। साहिब कहते हैं:

राती होवनि कालीआ सुपेदा से वंन॥
दिहु बगा तपै घणा कालिआ काले वंन॥

(अंग ७८९)

काली अंधेरी रात है, अमावस्या की रात है, लेकिन सफेद चीजें तो काली नहीं होतीं। रात की कालिमा सफेद वस्तुओं को काला नहीं कर सकती, चाहे कितनी काली हो। चाहे उसकी कालिमा के कारण हर चीज़ काली दिखाई दे, क्योंकि अंधेरा बहुत प्रबल है। अंधेरा सब को एक जैसा करके रखता है। अंधेरे में न सोना दिखाई देता है, न पीतल, न लोहा, सब कुछ एक जैसा। अंधेरे में केवल अंधेरा ही दिखाई देता है। अंधेरा इतना प्रबल और इतना अहंकारी है, कहता है, बस, मुझे ही देख और किसी को देखने की क्या ज़रूरत है?

महाराज कहते हैं कि ठीक है, ढंक देगा वक्ती तौर पर, परंतु सफेद चीजों को काला नहीं कर सकता। सफेद सूर्य चमका, चाहे कितना सफेद, चाहे कितनी रोशनी, कितनी सफेदी फैला दी लेकिन काली वस्तुएं सफेद तो नहीं होतीं, काली वस्तुएं काली ही रहेंगी। जिस मनुष्य के स्वभाव में संतपन (संतों जैसा मादा) है, दया है, शील है, संयम है, समदृष्टि है, प्रेम है। जिस मनुष्य का स्वभाव है चाहे कितनी काली अंधेरी रात हो, कितने कुसंगी हों, कितने दुष्ट हों, कितने ज़ालिम हों, संत का स्वभाव नहीं बदल सकता। उसमें दया रहेगी, उसमें निरवैरता रहेगी :

कबीर संतु न छाडै संतई जउ कोटिक मिलहि असंत॥
मलिआगरु भुयंगम बेढिओ त सीतलता न तजंत॥

(अंग १३७३)

सांप लिपटे हैं चंदन को, लेकिन सांपों की महक के साथ यारी है। किसी संत ने अभी तक चोर को नहीं मारा, हमेशा चोर ही चोर को मारते हैं। कभी किसी संत ने कातिल को नहीं मारा, कातिलों ने ही कातिल को मारा है। संत कोशिश करता है अगले के मन को बदलने की। अगले का मन बदल गया तो उसे समझ आ जाती है कि अभी संस्कार थे, कर्म थे, स्वभाव नहीं है। जिनके संस्कार बुरे हैं, बदलें, लेकिन जिनका स्वभाव ही बुरा है वे तो शांति की मूरत गुरु अरजन देव जी को गरम तवी पर बिठा देते हैं। दुष्टता स्वभाव है।

जहांगीर से दया की उम्मीद की भी नहीं जा सकती। उसका अपना ही लड़का खुसरो था। जिन्होंने इतिहास का कभी अध्ययन किया हो, लाहौर में खुले मैदान में कच्चा चमड़ा गऊ का, उसमें जड़ कर धूप में रखा था खुसरो को। तड़पा-तड़पा कर मारा था। उसका कसूर क्या था? उसने एक दिन कह दिया, अब्बा हजूर! आप बूढ़े हो गए हो और सारा दिन शराब के नशे में लीन रहते हो। आप से राज-पाट चलता नहीं, अम्मी हजूर नूरजहां चलाती हैं। यह सिंहासन मुझे दे दीजिए। पुत्र का एक हाथ मजबूत हो तो एक हाथ की वस्तु बाप द्वारा पुत्र को दे देनी चाहिए। पुत्र के दोनों हाथ मजबूत हो गए हैं और पिता कहे, मैंने तुझे कुछ नहीं देना। पिता-पुत्र का संघर्ष हो गया। समझदार था, मजबूत था, जवान था, साथ में कुछ सैनिकों की हमदर्दी भी थी। वे चाहते थे कि खुसरो तख़्त पर बैठे। मुंह से निकला, बागी, विद्रोही, पांच-सात गालियां भी निकालीं। खुसरो ने देखा कि हालात ठीक नहीं तो भाग गया। अब कहां जाए? सारे देश का बादशाह जहांगीर हो, कहां भाग कर जाए?

इस तरह का बेसहारों का सहारा आदि काल से केवल गुरु नानक का घर रहा। गुरु अरजन देव जी के पास चला गया, महाराज! मुझे रात का ठिकाना भी दे दो और मैं तीन दिन का भूखा भी हूं। दिया सहारा। यही इलज़ाम जहांगीर ने गुरु अरजन देव जी पर लगाया। बाग़ी को पनाह, विद्रोही को पनाह! गुरु का घर पेड़ की तरह है। तोते भी आकर बैठते हैं, चिड़ियां भी आकर बैठती हैं, सभी का पेड़ सहारा है।

तूं तरवरु हउ पंखी आहि॥

(अंग ३२३)

भक्त कबीर' जी कहते हैं, हे प्रभु! तू तो पेड़ की तरह है और हम पेड़ के पक्षी हैं। इस पेड़ पर ये पक्षी क्यों बैठे हैं? यह भूखा पक्षी क्यों बैठा है? इस पेड़ को जड़ से काट दो। साहिब कहते हैं, तू कुछ नहीं कर सकता। क्या कर सकता है? जो प्रभु की बनाई हुई मर्यादा है, वह अटल है। आप महावाक सतिगुरु का श्रवण कीजिए। जिस प्रकार सतिगुरु कह रहे हैं, शृंखलाबद्ध आप श्रवण कीजिए शाब्दिक अर्थों में। सतिनामु वाहिगुरु साहिब जी!

सूही महला ४॥

कीता करणा सरब रजाई किछु कीचै जे करि सकीऐ॥

जो कुछ जगत में किया हुआ है, बनाया हुआ है, उसकी रज़ा में है, उसका हुक्म है, उसकी बनाई हुई मर्यादा है। जो कुछ भी है सब कुछ उसकी बनाई हुई मर्यादा में बना है। तेरे साथ भी मर्यादा है। जो तू करेगा, संस्कार बनेंगे।

आपणा कीता किछू न होवै जिउ हरि भावै तिउ रखीऐ॥१॥

तेरे अपने किए से कुछ भी नहीं होगा। जो कुछ प्रभु ने किया हुआ है उसमें करने से सुख है, उसमें जीने से सुख है। तू भला भी करके देख ले, उसकी मर्यादा की उल्लंघना नहीं हो सकती।

मेरे हरि जीउ सभु को तेरै वसि॥

सब कुछ तेरे वश में है, सब कुछ तेरे अंदर है। जैसे मछली का जन्म, जीवन और मरण सागर के अंदर है, हमारा जन्म, जीवन तथा मरण उस प्रभु की बनाई हुई मर्यादा के अंदर है।

असा जोरु नाही जे किछु करि हम साकह
जिउ भावै तिवै बखसि ॥ १ ॥ रहाउ॥

हे प्रभु! हमारे पास ताकत नहीं है, हमारे पास ज़ोर नहीं है कि हम हुक्म की उल्लंघना कर सकें, इसलिए हे प्रभु! जैसे तू चाहे बख्श दे।

सभु जीउ पिंडु दीआ तुधु आपे तुधु आपे कारै लाइआ॥

तन दिया, मन दिया और भूख मज़बूर करती है कि कुछ कर, प्यास मज़बूर करती है कि कुछ करना है। आवश्यकताएं मज़बूर करती हैं, कुछ करना है तथा इसी तरीके से सब कुछ उसी का बनाया हुआ है और उसकी प्रेरणा से ही मनुष्य सब कुछ करते हैं।

जेहा तूं हुकमु करहि तेहे को करम कमावै
जेहा तुधु धुरि लिखि पाइआ॥२॥

उसने धुर दरगाह से लिखा है कि कर्मों से बने हैं संस्कार और संस्कारों से बना है स्वभाव। उसी के अनुसार मां-बाप मिलते हैं, उसी के अनुसार दुख-सुख मिलता है, उसी के अनुसार तन का रंग मिलता है, रूप मिलता है, उसी के अनुसार कद मिलता है। जैसे यह प्रभु तूने धुर दरगाह से लिखा है, उसी तरीके से यह जीव सब कुछ प्राप्त करता है।

पंच ततु करि तुधु स्रिसटि सभ साजी
कोई छेवा करिउ जे किछु कीता होवै॥

यदि उसकी मर्यादा से, उसके लिखे हुए लेख से कुछ उल्टा भी किया जा सकता है तो साहिब कहते हैं कि तू करके ही दिखा। पांच तत्वों का उसने संसार बनाया है और पांच तत्वों में ही तू विचरण कर सकता है। हां, तू कहे मैं भी कुछ कर सकता हूं तो फिर छठा तत्व बनाकर दिखा, एक तत्व और बनाकर दिखा। तुझे भी कर्त्ता मान लें। नहीं तो तू कर्ता नहीं है, कृत है।

इकना सतिगुरु मेलि तूं बुझावहि इकि मनमुखि करहि सि रोवै॥३॥

एक को पूर्व जन्म के संस्कारों के अनुसार गुरु का मिलन हो जाता है, उन्हें सूझ मिल जाती है, समझ मिल जाती है। हुक्म को मान लेते हैं, हुक्म में रहते हैं, मर्यादा में रहते हैं। मर्यादा के साथ संघर्ष नहीं करते, मर्यादा को तोड़ने की कोशिश नहीं करते। एक मनमुख हैं जो मर्यादा को तोड़ने की कोशिश करते हैं। तोड़ तो नहीं सकते, लेकिन महा दुख भोगते हैं, महा क्लेश भोगते हैं।

हरि की वडिआई हउ आखि न साका हउ मूरखु मुगधु नीचाणु॥

उस परिपूर्ण परमात्मा की प्रशंसा, गुण मैं सारे बयान नहीं कर सकता, इतनी समझ नहीं है, इतनी सुचेतनता नहीं है, इतनी प्रबल रसना नहीं है कि उस सब कुछ का बखान करूं।

जन नानक कउ हरि बखसि लै मेरे सुआमी
सरणागति पड़आ अजाणु॥४॥

हे प्रभु! अनजान हूं, तेरी शरण में आये हैं। तू बख्शिश कर, तू रहमत कर, अपने दामन में ले, अपने चरणों में जगह दे। धन्य गुरु तेग बहादर साहिब जी का श्लोक मैं तुम्हें सुनाता हूं :

चिंता ता की कीजीऐ जो अनहोनी होइ॥
इहु मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ॥

(अंग १४२९)

यह श्लोक सभी को कंठस्थ है। जितनी सतिगुरु ने सूझ दी है, आपके सामने बात खोली है। सतिगुरु रहमत करें, बख्शिश करें कि शब्द का सार-तत्व हमारे हृदय में बसे। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥
वाहिगुरु जी की फ़तह॥



गगन मै थालु

आरती

रागु धनासरी महला १॥

गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने
तारिका मंडल जनक मोती॥
धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे
सगल बनराइ फूलंत जोती॥१॥
कैसी आरती होइ॥
भव खंडना तेरी आरती॥
अनहता सबद वाजंत भेरी॥१॥ रहाउ॥
सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ
सहस मूरति नना एक तुोही॥
सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु
सहस तव गंध इव चलत मोही॥२॥
सभ महि जोति जोति है सोइ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ॥
गुर साखी जोति परगटु होइ॥
जो तिसु भावै सु आरती होइ॥३॥
हरि चरण कवल मकरंद लोभित मनो
अनदिनुो मोहि आही पिआसा॥
क्रिपा जलु देहि नानक सारिंग कउ
होइ जा ते तेरै नाइ वासा॥४॥३॥ (अंग १३)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ!

धन्य गुरु नानक देव जी महाराज का यह परम वाक जिसे सुन कर, पढ़ कर टैगोर समाधिलीन हो गया था। धनासरी राग का यह महा वाक है और छोटा मूल मंगल वह भी दर्ज़ है। मूल-मंत्र को हर जगह पर 'एक' से आरंभ किया है और प्रसादि पर समाप्त किया है। वह एक है। वह जो एक है, वह क्या है? ओअंकार है। इसकी गहराई में जाएं कि ओअंकार क्या है? जिससे उत्पत्ति हो रही है, पालणा हो रही है। वह जो एक है, शब्द है। कौन सा? ओअंकार। जो एक है, वह सत्य है, गुरु है, प्रसादि है, दयालु है, कृपालु है, करुणाकर है, रहीम है।

शब्द का शीर्षक है 'आरती'। यह आरती ही केवल हमारे देश में प्रचलित हुई और सनातन मत के साथ प्रचलित हुई। थाल में सुगंधित वस्तु रख लेना और अगरबत्तियां आदि जला लेना, दीये रख लेना, फिर उस थाली को किसी मूर्ति के आगे चार बार चरणों में घुमाना, दो बार नाभी वाली जगह पर घुमाना, एक बार मुंह के आगे से घुमाना तथा सात बार पूरे शरीर की आरती उतारना। इस प्रकार गायन करते हुए ये आरती उतारते हैं। यह भी एक तरीके से पूजा का ढंग है। इस आरती के समय जगन्नाथपुरी में बहुत रौनक होती है। जगन्नाथपुरी में आरती की बहुत महानता है। इस दृश्य को गुरु नानक देव जी ने भी देखा है। देखकर जो गुरु नानक ने आरती की है वह यही है जो इस शब्द में बंद है। यह आरती सवेरे-शाम नहीं हर समय हो रही है।

मैं एक अर्ज़ करूं। धन्य गुरु नानक देव जी महाराज कहते हैं कि मैंने इस प्रकृति से परमात्मा की प्रेरणा ली है तथा प्रकृति पांच तत्वों की है। साहिब साफ कहते हैं :

करते कुदरती मुसताकु॥ (अंग ७२४)

मुसताकु (मुशताक) कहते हैं आशिक, देखने वाला। देखकर जो आशिक हो गया है और देखना चाहता है, अरबी-फारसी में उसे मुशताक कहते हैं। हे कर्त्ता! तेरा तो मुझे कुछ नहीं पता, लेकिन तेरी

किरत को देख कर मैं मुशताक हो गया हूं। तेरे दर्शनों की चाहत पैदा हो गई है। मैं तेरा आशिक बन गया हूं, क्योंकि कुदरत ने मुझे तेरा आशिक बनाया है, तो फिर साहिब कहते हैं :

बलिहारी कुदरति वसिआ॥
तेरा अंतु न जाई लखिआ॥

(अंग ४६९)

मैं सदके (कुर्बान) जाता हूं इस कुदरत से। भक्त कबीर भी ऐसा कहते हैं:

कुदरति करि कै वसिआ सोइ॥
वखतु वीचारे सु बंदा होइ॥

(अंग ८३)

सभी अवतारी पुरुषों ने प्रेरणा तो प्रकृति से ली है, चाहे सनातनी ऋषि-मुनि हैं, चाहे महात्मा बुद्ध हैं, चाहे योगियों के मुखी गोरख तथा मछंदर हैं, चाहे इस्लाम के प्रवर्त्तक मुहम्मद साहब हैं और चाहे गुरमति के जन्म-दाता धन्य गुरु नानक देव जी महाराज, धन्य गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज हैं। प्रेरणा तो कुदरत से ली है और कोई साधन नहीं है।

प्रकृति में पांच तत्व हैं—पानी, अग्नि, हवा, पृथ्वी, आकाश। ये पांच तत्व बन जाते हैं। सारी कुदरत इन पांच तत्वों में आ जाती है। इन पांच तत्वों में से किसी एक तत्व का अवतारी पुरुष पर ज़्यादा प्रभाव पड़ा है या इस प्रकार कह लो कि कुदरत तक पहुंचने का साधन उसने पांच तत्वों में से किसी एक तत्व को बनाया है।

इसे स्पष्ट करने से पहले मैं इतनी अर्ज़ करूं, एक गुणवान मनुष्य के अंदर बहुत से गुण होंगे लेकिन एक गुण प्रधान होता है। वह हर समय होता है तथा शेष गुण किसी-किसी समय प्रकट होते हैं। मनुष्य अवगुणहारा है। सैंकड़ों-हज़ारों प्रकार के अवगुण उसके अंदर होंगे लेकिन एक गुण प्रधान होता है। शेष अवगुणों के धुएं किसी-किसी समय निकलते हैं, जब वह उनका इस्तेमाल करता है। हो सकता है मेरी यह पकड़ गलत हो, कोई दावे वाली बात नहीं। ऐसा देखने में आया है कि हर अवतारी पुरुष के अंदर कोई अलग-अलग गुणों की

शमा जली है हर समय। इसलिए सारे अवतारी पुरुष अलग-अलग दिखाई देते हैं। आप सारे अवतारों को सामने बैठा दो, वे एक जैसे नहीं होंगे, हो भी नहीं सकते। घर में चार बच्चे हैं, चारों अलग-अलग हैं। लाख कोशिश करें, पति-पत्नी एक हो जाएं। यह तब हो सकते हैं यदि दोनों का गुण एक ही प्रधान हो या दोनों का अवगुण एक ही प्रधान हो। ऐसा बहुत कम होता है कि दो भाइयों का गुण एक ही प्रधान हो, पिता-पुत्र का गुण एक ही प्रधान हो।

संसार में देखोगे, कोई भाई, भाई के साथ सहमत नहीं है, कोई पिता, पुत्र के साथ सहमत नहीं है, प्रत्येक का गुण अलग-अलग है। गुण तो उस गुणवान में बहुत सारे होते हैं लेकिन एक गुणों की शमा हर समय जलती रहती है। अवगुण तो गुनहगार के अंदर हज़ारों होंगे लेकिन एक अवगुण का धुआं हर समय सुलगता रहता है। दिन-रात उसका उसी गुण तथा अवगुण में व्यतीत होता है। शेष गुणों-अवगुणों के दीपक तब जलते हैं जब उसे आवश्यकता हो।

इस्लाम के प्रवर्त्तक प्रकृति में जिस तत्व को प्रधानता देते हैं, वह धरती है। मुहम्मद साहब सुगंध के बहुत रसिया थे। कोई उन्हें कीमती घोड़ा पेश कर दे खुश नहीं होते थे, कोई हीरे-मोतियों की थैली आगे रख दे, कुछ भी नहीं, लेकिन छोटी-सी इत्र की शीशी आगे रख दे, आशीष देते थे, खुश हो जाते थे। सुबह से लेकर शाम तक अलग-अलग सुगंध उन्होंने अपने जिस्म पर लगाना, यह उनका रस बहुत प्रबल था।

धरती का जो सिरमौर गुण है, वह सुगंध है। जिन्होंने कभी पांच तत्व की प्रकृतियों का अध्ययन किया है, उन्हें पता है। यदि धरती नहीं तो सुगंध हो ही नहीं सकती। धरती ऐसा तत्व है, सुगंध जिसकी प्रकृति है। धरती का तत्व मुहम्मद साहब की दुनिया में सिरमौर हो गया। बार-बार अपना सिर ज़मीन पर रखना, सजदा ही करना, माथा ही टेके जाना। दुर्गंध से दूर भागते थे। मैं देखता हूं कि चाहे गरीब से गरीब मुसलमान हो, चाहे अच्छा खाने को नहीं मिलता, अच्छा पहनने को नहीं, लेकिन इत्र तो उसने लगाया हुआ है। इस्लामी जगत में सबसे बड़ी भेंट है सुगंध भेंट करना।

इस्लाम के बाद लें सनातन धर्म को। मैंने अपने ढंग से अध्ययन

करके देखा है कि इनकी दुनिया में पानी-तत्व प्रधान है। पानी-तत्व की प्रकृति है रस। सारा रस पानी के कारण है। किसी फूल में, किसी फल में, किसी पदार्थ में जो रसना का रस है, वह रसा है, पानी है। ब्राह्मण, पुजारी, प्राचीन ऋषि-मुनि सारा दिन मूर्तियों को भोग लगाते रहेंगे। अब राज-भोग, अब ब्रह्म-भोग, अब फलाना भोग। परमात्मा क्या है? रसा है, रस है। पानी तत्व की यह प्रकृति है। फिर पानी का उपयोग। परमात्मा आया है धरती में से सुगंध के द्वारा। सारी साधना केंद्रित है पानी पर। परमात्मा वह रस है। कौन-सा? जो निर्मल है। मुहम्मद साहब वह खुदा है। कौन? जो विनम्र है। वह खुदा जिससे महक आ रही है, जो विनम्र है। तो धरती पैरों के नीचे है, सभी के पैरों के नीचे है। हमें तो झुक कर किसी के पैरों पर हाथ लगाना पड़ेगा, धरती तो सभी के पैरों के नीचे है, पशुओं के पैरों के नीचे, मनुष्यों के पैरों के नीचे। धरती से ज्यादा निर्माण (नम्रता) कहां ढूंढोगे? एक आलम कहता है :

जुबां खोलेगा मुझ पर बदजुबां बद शुबारी से।
कि मैंने ख़ाक भर दी है उनके मुंह में ख़ाकसारी से।

जब मैं सभी के चरणों की ख़ाक हो गया तो अब क्या मेरी निंदा करोगे? ख़ुदा बहुत विनम्र है, सिर पर चढ़ कर नहीं बैठता, किसी के सिर का बोझ नहीं बनता। विनम्र के पास सुगंध है, धरती के पास सुगंध है। सनातन मत, पानी बनकर परमात्मा प्रकट हुआ है। पानी निर्मल है, रस है। हे प्रभु! तू बहुत निर्मल है। ऐसा निर्मल रस बन कर प्रकट हुआ है। सारा दिन तरह-तरह के भोज एवं भोजन को जोड़ा है ब्रह्म से। ब्रह्म-भोज, यह परमात्मा का खाना। अन्न ब्रह्म, क्योंकि भोजन-रस, प्रभु-रस है।

हिंदू जगत की साधना स्नान पर खड़ी हो गई। माघी का स्नान, कुंभ का स्नान, रोज़ सुबह-शाम का स्नान। प्रभु निर्मल है। खुदा धरती है और मेरा मस्तक हर समय धरती पर पड़ा रहे। तो पांच वक्त नमाज़, सैंकड़ों बार ज़मीन पर पड़ना। जगत के अवतारी पुरुषों में एक तत्व प्रधान है पांच तत्वों में से। सज्जन पुरुष में महान गुण का जो दीपक उसके अंदर जल रहा है, उसके सहारे पर कभी-कभी वह शेष गुणों

का भी इस्तेमाल कर लेता है, लेकिन एक गुण हर समय विनम्रता, निर्माणता की मूर्ति थे मुहम्मद साहब। परमात्मा कभी जताता नहीं कि मैं हूं। सारी शक्ति उसके पास, सारी सामर्थ्य उसके पास तथा गज़ब की बात, कहीं शोर-शराबा नहीं करता कि मैं हूं। तुम्हारी मर्जी है मानो, तुम्हारी मर्जी है न मानो। मैं तो प्रकट ही नहीं होता।

मुहम्मद साहब की जेब हर समय धन से खाली होती थी। कई बार आवश्यकता होती थी तो भी नहीं होते थे। निर्धन थे, लेकिन यकीन जानो, उनकी थैली में कोई न कोई खुशबू ज़रूर होती थी। आम लोगों को भी पता था कि सुगंध-रसिया थे तो भेंट सुगंध की आगे रखते थे। बस, इसी में जीये मुहम्मद साहब।

प्रभु निर्मल है। इसलिए सनातन मत में सबसे बड़ा अवगुण क्या है? गंदा होना। यह गंदा जीता है, गंदगी खाता है, गंदगी पहनता है, गंदा रहता है। मलेश, यह सबसे बड़ी गाली हो गई। आप सुन कर हैरान होगे, किसी मनुष्य से कोई अच्छी इत्र की सुगंध आ रही हो, लेकिन हो अवगुणहारा। अरब देश में तो गाली यही है, दुर्गंध। तू तो मलेश है इस देश में, क्योंकि प्रभु निर्मल है। निर्मलता तो सारी बाणी पर खड़ी है। राजा-महाराजा जिसकी लपेट में आ गए वो था योग मत। अभी भी बहुत प्रभाव है अमेरिका में। अमेरिका में उन संतों का प्रभाव है जिसके नाम के साथ योगी लगा है, इसलिए जो-जो संत-योगी नहीं हैं, उन्होंने भी अपने साथ योगी शब्द लगवा लिए। कई सिक्ख श्रद्धालुओं ने भी अपने साथ योगी जोड़ लिया, क्योंकि अमेरिका में प्रभाव है योग का।

किसी समय भारत भी योगियों की लपेट में था। गोरखपुर गोरख के नाम पर है। सभी नेपालियों को जो गोरखे कहा जाता है, इसलिए कि वे गोरख को मानने वाले थे। नानकमता पहले गोरखमता था। भरथरी जैसे, गोपीचंद जैसे योगी बन गए। देश के महान मनुष्य योगी बन गए। जब धर्म पाखंडियों एवं कमजोर आदमियों के पास होगा तो धर्म नहीं चलेगा। अधर्म ताकत हो और धर्म कमजोर के पास हो। शक्तिशाली के पास नास्तिकता हो और श्रद्धा कमजोर आदमी के पास हो तो श्रद्धा के डगमगाते देर ही न लगे। ये कमजोर श्रद्धालु उन शक्तिशाली

विचारकों के सामने टिक नहीं सकेंगे।

पंजाब नास्तिक होता जा रहा है। संत एवं साइंटिस्ट, ये दो ही उच्च कोटि के समझदार मनुष्य हैं। दोनों के अविष्कार का ढंग अलग-अलग है। साइंटिस्ट एक वैज्ञानिक पदार्थ को तोड़ता है। तोड़ते-तोड़ते जो पदार्थ का आखिरी हिस्सा उसके हाथ आया वह है परमाणु। वह कहता है कि परमाणु शक्ति है। यदि अणु मेरे हाथ में है तो अब अणु को मैं जैसे इस्तेमाल करना चाहूं, मैंने इस्तेमाल करना है। जिसे मैं अपनी मर्जी के मुताबिक इस्तेमाल कर सकता हूं, उसे मैं माथा कैसे टेकूं? उसकी मैं पूजा कैसे करूं? वैज्ञानिक नास्तिक है। एक संत अपनी सुरति पर सब कुछ को जोड़ते-जोड़ते पहुंचा है परमात्मा तक और संत ने भी कह दिया कि परमात्मा शक्ति है। ऐसी शक्ति जो चेतन है, सुंदर है, सत्य है। संत कहता है कि प्रभु! जो तेरी मर्ज़ी है, मैं तेरी रज़ा में राज़ी हूं। हे प्रभु! मैं अपनी मर्जी के मुताबिक तुझे चला ही नहीं सकता। तू तो कर्त्ता है। परमाणु मेरे हाथ में आया है, मैं अपने ढंग से इस्तेमाल करूंगा। मैंने क्या करना है? यदि शक्तिशाली आदमी अपनी सारी शक्ति तोड़ने में लगा दे तो स्वाभाविक बात है, नास्तिक हो जाएगा। अपनी सुरति को जोड़ने वाले कमजोर हैं, क्योंकि श्रद्धा बहुत कमजोर है। अपनी सुरति को तोड़ने वाले बहुत ताकतवर हैं, तो ये कमजोर श्रद्धा उनके सामने टिकती नहीं।

मैं पिछले साल टैक्सी से जालंधर गया। शहर से जब बाहर निकले तो रास्ते में एक कब्र थी। टैक्सी ड्राइवर ने वहां गाड़ी खड़ी की। लम्बी दाढ़ी थी। उसके हाथ में माला भी थी। मुझे खुशी हुई ड्राइवर गुरमुख मिला, लेकिन कब्र को माथा टेक रहा है। वह हार भी एक लाया था। वह भी उसने कब्र पर चढ़ाया। कहता, ज्ञानी जी! जो यहां माथा टेक कर न जाए, एक्सीडेंट हो जाता है। कितनी कमजोर श्रद्धा! कब्र को मानना ऐसे है जैसे संत या ख़ुदा मर गया है और कब्र में है तथा मुर्दे को पूजता है :

साकत मरहि संत सभि जीवहि॥ (अंग ३२६)

संत कभी नहीं मरता और जो मर जाता है वह संत नहीं है। संत तो अपने घर जाता है :

कबीर संत मूए किआ रोईऐ जो अपुने ग्रिहि जाइ॥
रोवहु साकत बापुरे जु हाटै हाट बिकाइ॥

(अंग १३६५)

जिन्होंने फिर-फिर पैदा होना है, फिर मरना है, उन्हें रोइए। वे मरते हैं। संत नहीं मरता। यदि मरता है तो फिर उसकी कब्र बन गई है। कब्र बन गई है तो फिर मर गया है। मर गया तो फिर संत नहीं है।

गुरु नानक का सिद्धांत क्या है? क्या कह रहे हैं? गुरबाणी क्या कह रही है कि इस पर हमारा ज़ोर नहीं है। न कभी खुद पढ़ा, न कभी खुद समझा और दूसरों को ख़ाक समझाएं। खैर! पानी-तत्व से प्रेरणा के लिए खंडन करने की कोई आवश्यकता नहीं, क्यों इतना स्नान करते हैं। हां, विचार नहीं है स्नान ही स्नान है। एक डुबकी मैंने लगाई और सारे गुनाह मेरे धुल गए। नहीं, मेरे शरीर की मैल धुल गई। ऐसा समझूं तो डुबकी लगाना मेरा ठीक है। पानी निर्मल है, तन की मैल दूर करता है, कपड़ों की मैल दूर करता है। परमात्मा निर्मल है, इसका बोध पानी से मिले तो यह बोध संसार के हृदय को भी निर्मल करता जाएगा। परमात्मा रस है। उसका रस संसार से बे-रस करता जाएगाः

रारा रसु निरस करि जानिआ॥

(अंग ३४२)

रोशनी, प्रकाश यह परमात्मा है। प्रकाश का केन्द्र तो अग्नि है। चौबीस घंटे आग जला कर रखना है। आग इतनी पावन है कि आग की ख़ाक, उसके चरणों की धूल, उसे शरीर पर लगाना है। गोरख का हुक्म होता था, धुएं में देख लेना कहीं आग ठंडी न पड़ जाए, जलती रहे। अग्नि तत्व की जो प्रकृति है वह सुंदरता है, रूप है। हे प्रभु! तू तो अत्यंत सुंदर है।

योगियों के आस-पास एक महान दार्शनिक एवं अवतारी पुरुष है महात्मा बुद्ध। उनके सामने आकाश प्रधान है, पांचवां तत्व है। इसे अरबी-फारसी में कहते हैं, ख़ला है, ख़ालीपन है। इस साधना को

महात्मा बुद्ध ने जन्म दिया। कुछ प्राप्त करने की कोशिश न करो, सुन्न होने की कोशिश करो। सभी विचारों को एक ओर कर दो। जप करोगे तो करना पड़ेगा, कहीं ध्यान जोड़ोगे तो जोड़ना पड़ेगा, कहीं कुछ सुनोगे तो सुनना पड़ेगा। कुछ भी ज़रूरत नहीं। जो अंदर है इसे खाली करो, बिलकुल सुन्न हो जाओ। आप सुन कर हैरान होंगे, आधे से ज्यादा बौद्ध जगत किसी मंत्र का जाप नहीं करता। बस, बैठता है, सुन्न होने की कोशिश करता है। सभी विचारों को शांत करें और निकालें। निकालने का ढंग क्या है? अंदर जो विचार चल रहे हैं, इनको देखना है, शायद शांत हो जाएं। बुरे विचार को गहराई से देखोगे तो नहीं चल सकेगा। देखना ही ब्रेक है। जो तत्व सिरमौर हो वह गुरु है।

सनातनी ऋषियों का गुरु पानी है, योगियों का गुरु अग्नि है, बौधियों का गुरु आकाश है, इस्लाम तत्व के प्रवर्त्तक मुहम्मद साहिब, उनका गुरु धरती है। परंतु गुरु नानक तो कहते हैं कि पवन गुरु। पवन तत्व की प्रकृति क्या है? बोलना, आवाज़। गुरु नानक की दृष्टि में प्रभु-संगीत है :

वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे॥
केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे॥

(अंग ६)

हे प्रभु! तू संगीत है, गीत है। कोई बहुत समझदार मनुष्य जब महात्मा बुद्ध को कहे कि कोई जीवन की ख़ास घटना, आत्मा का कोई ख़ास अनुभव हमारे सामने रखो। चाहे कथा करते होते थे आप और फिर चुप हो जाते थे। जब पांच-सात मिनट चुप रह गए तो अगला पूछता है कि हमने तो प्रश्न किया है और चुप रह गए हो। महात्मा बुद्ध कहते हैं कि मेरा चुप रहना ही तो उत्तर है। चुप कराओ अपने मन को, सुन्न हो जाओ।

गुरु नानक ने जब कुछ कहना है और परमात्मा जब प्रकट होता है उनके अंदर जब, ये सरूर तथा मस्ती में आते हैं तो कहते हैं, मरदानिआ! रबाब छेड़, रब्ब बोलण लग्गा है। मरदाना केवल रबाब छेड़ता है, गाते गुरु नानक खुद हैं। जब गाते थे तो उड़ते हुए पक्षियों

को उड़ना भूल जाता था, चरते हुए पशुओं को चरना भूल जाता था; यदि कोई मनुष्य जा रहा है तो आत्म-झोंके में लीन हो जाता था, ठग लीन हो जाता था, चोर मस्त हो जाते थे, दैंत्य तक देवता बन जाते थे। ऐसा गुरु नानक का गाना था। गाना ही भक्ति बन गया, गाना ही बंदगी बन गया, गाना ही योग बन गया, गाना ही भोग बन गया, गाना ही परमात्मा बन गया :

जोगु बनिआ तेरा कीरतनु गाई॥

(अंग ३८५)

इसी से तेरी बंदगी है और पवन ही गुरु है, प्रधान है, सिरमौर है। संसार के साथ सम्बंध जुड़ते हैं बोल कर तथा बोलना पवन तत्व की प्रकृति है। शेख साअदी साहिब कहते हैं कि जितनी देर तक आदमी बोले न, उसके गुणों-अवगुणों का पता नहीं चलता। मनुष्य के अंदर जो कुछ है, ९० प्रतिशत वचनों द्वारा प्रकट होता है। सारे सम्बंध जुड़ते हैं बोल कर, देखकर नहीं जुड़ते। देखता तो आदमी दुश्मन भी है, बोलता नहीं है। हमारी कोई बोलचाल नहीं है।

बोलना ही गुरु है, शब्द ही गुरु है, आवाज़ ही गुरु है। ऐसा सैद्धांतिक नुक्ता धन्य गुरु नानक देव जी महाराज ने जगत के सामने रखा है। गुरु नानक ने आरती उतारी है ब्रह्मांड की। कोई हिस्सा खाली नहीं रह जाता। इतनी बड़ी आरती! उस आरती के उपासक हैं धन्य गुरु नानक देव जी महाराज। धनासरी राग का यह महावाक श्रवण करो :

गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती॥

आरती के लिए थाल चाहिए जिसमें सब कुछ रखना है। आकाश ख़ला है, खाली है, जिसमें सब कुछ रखना है। आकाश ख़ला है, खाली है, इसमें सब कुछ रख सकते हैं। यह गगन थाल है। इसमें सूर्य तथा चंद्रमा दो जलते हुए दीपक हैं तथा यह जो इतने तारे हैं, इस थाल में रखे हुए मोती हैं। हे परिपूर्ण परमात्मा! ऐसी है तेरी आरती।

धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती॥१॥

सुगंधित जो हवा चल रही है, चंदन को छू कर यह मानो सुगंध

है आरती के लिए। यह चारों ओर सुगंध फैलाई गई है और जितनी वनस्पति है तथा इन्हें लगे हुए फूल हैं, यह आरती के लिए पुष्प हैं।

कैसी आरती होइ॥ भव खंडना तेरी आरती॥

हे भय को नाश करने वाले! हे दुखों को नाश करने वाले परिपूर्ण परमात्मा! कैसी तेरी सुंदर आरती हो रही है!

अनहता सबद वाजंत भेरी ॥ १॥ रहाउ॥

हर समय नगाड़े बज रहे हैं, शहनाइयां बज रही हैं। कौन-सी? अनाहद नाद की। तू हर समय बोल रहा है संगीत में, गीत में। यह अनेकों तरह के साज़ ब्रह्मांड में बज रहे हैं। इस ढंग से यह तेरी सुंदर आरती हो रही है।

सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ
सहस मूरति नना एक तोही॥

निर्गुण रूप में तेरी कोई मूर्ति नहीं है। सर्गुण रूप में ये सब मूर्तियां तेरी हैं। यह पहाड़, पेड़, पशु, पक्षी, मनुष्य तेरी ही मूर्तियां हैं और यह मूर्तियां तेरी बनाई हुई हैं। तूने अपनी तस्वीर खुद बनाई है। जिसे मैंने बनाया है वह तो कर्त्ता है। उसका मैं कर्त्ता हो गया। हमेशा कृति से कर्त्ता बड़ा होता है। नहीं, यह सारा सर्गुण रूप है, परमात्मा की कृति है। आकार रूप में तू अनंत आंखों का मालिक है, निराकार रूप में इसकी कोई आंख नहीं है।

सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु
सहस तव गंध इव चलत मोही ॥ २ ॥

निराकार रूप में तेरे कोई चरण नहीं, लेकिन फिर भी तू हर समय गतिमान है। साकार रूप में तेरे अनेकों पैर हैं। मनुष्य के पैर हैं, पशु-पक्षियों के पैर हैं, कीड़े-मकौड़ों के पैर हैं। निर्गुण रूप में तेरी कोई नासिका नहीं है, लेकिन सर्गुण स्वरूप में तू नासिका वाला है। अनंत नासिका का तू मालिक है।

सभ महि जोति जोति है सोइ॥

हे निराकार! इस आकार में सभी में तेरी ज्योति है। तू ही साकार

रूप में प्रकट हुआ है।

तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ॥

उसी की ज्योति के कारण यह आकार में हरकत है। उसी के प्रकाश के कारण सभी में प्रकाश है।

गुर साखी जोति परगटु होइ॥

सभी में उसी की ज्योति है, वही व्यापक है। यह गुरु-शब्द के द्वारा प्रकट होता है। गुरु साखी बने, गुरु गवाह बने, गुरु के शब्द को मनुष्य आधार बनाए तो फिर यह पता चलता है।

जो तिसु भावै सु आरती होइ॥३॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! तेरे हुक्म में रहना, बस यही आरती है।

हरि चरण कवल मकरंद लोभित मनो
अनदिनो मोहि आही पिआसा॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! तेरे चरण कमलों की महक में मैं लालची हो गया। दिन-रात यही प्यास बनी हुई है।

क्रिपा जलु देहि नानक सारिंग कउ
होइ जा ते तेरै नाइ वासा॥४॥३॥

हे प्रभु! कृपा कर, नानक पपीहे को, नानक सारंग को अपने नाम का जल दे, ऐसी प्यास है, ऐसी तू रहमत कर, बख़्शिश कर।

बार बार हरि के गुन गावउ॥

(अंग ३४४)

श्वास-ग्रास चल रहे हैं। वाहिगुरु-वाहिगुरु चलता रहे, बाणी चलती रहे तथा उतनी देर तक चलती रहे जितनी देर तक बाणी का रूप न हो जाएं। साहिब रहमत करें। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥
वाहिगुरु जी की फ़तह॥



कहि कबीर सो भरमै नाही

रागु धनासरी बाणी भगत कबीर जी की

१ओं सतिगुर प्रसादि॥

सनक सनंद महेस समानां॥
सेखनागि तेरो मरमु न जानां॥१॥
संतसंगति रामु रिदै बसाई॥१॥ रहाउ॥
हनूमान सरि गरुड़ समानां॥
सुरपति नरपति नही गुन जानां॥२॥
चारि बेद अरु सिंम्रिति पुरानां॥
कमलापति कवला नही जानां॥३॥
कहि कबीर सो भरमै नाही॥
पग लगि राम रहै सरनांही॥४॥१॥

(अंग ६९१)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥
वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ!

भक्त कबीर भक्तों की दुनिया में अपनी एक ख़ासियत रखते हैं। यह ठीक है, भक्त बहुत से हुए हैं, लेकिन मानसिक अवस्था एक हो सकती है, परम रस एक हो सकता है। जिस ढंग से उस रस को, उस अनुभव को वचनों द्वारा कबीर ने प्रकट किया है ऐसा कह लो यह सामर्थ्य उसी को आई है। विद्वान इसे इस प्रकार बांटते हैं–धार्मिक तल की वह पहली दुनिया, जिन्होंने समझा और समझा रहे हैं, जाना है तथा बताने की कोशिश करते हैं। दूसरी दुनिया है, जाना तो कुछ भी नहीं लेकिन बताते हैं, समझा तो कुछ भी नहीं है, लेकिन समझाने

के यत्न में हैं। यह वर्ग सबसे ज़्यादा है। एक तीसरी दुनिया भी है जिनके कदमों के निशान ज़मीन पर नहीं बनते, क्यों? समझा तो है लेकिन समझा नहीं सके, जाना तो है लेकिन इशारे नहीं कर सके। धार्मिक जगत अभिव्यक्त हो रहा है, इसके कारण। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, चर्च इस तरह के समझाने वालों से भरे पड़े हैं, समझा नहीं है समझा रहे हैं, देखा नहीं है संसार को कहते हैं देखो। जो तीसरी दुनिया है यह समय में होता है। समझा तो है लेकिन समझा नहीं सकते। यह दुनिया की बहु-संख्या में होता है, समझा कुछ भी नहीं, समझा रहे हैं। इनके बारे में इकबाल को भी कहना पड़ा। इकबाल बहुत उपदेशक है:

मन बातों से मोह लेता है गुफ़तार का,
यह ग़ाज़ी बना किरदार का ग़ाज़ी बन न सका।

ये गुफ़तार के ग़ाज़ियों के साथ मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे भरे पड़े हैं। कबीर उन भक्तों में से है जिनके पास पदार्थ भी बहुत हैं, बांटने के लिए बर्तन भी बहुत हैं। समझ बहुत है, समझाने का यत्न भी बहुत किया है। जाना है, दुनिया जान सके, ऐसा उद्यम भी किया है।

होरि केते तुधनो गावनि से मै चिति न आवनि
नानकु किआ बीचारे॥

(अंग ३४७)

पता नहीं और कितने गा रहे हैं और गा-गा कर आनंद ले रहे हैं। साहिब कहते हैं कि मेरी याद में नहीं हैं। उनके कदमों के निशान नहीं बने। जिन्होंने समझाने का यत्न किया वे खुद भी समझे हैं, दुनिया उनसे समझी नहीं है। उनके वचनों में सोज़ होता है। यदि मनुष्य पास आए तो मनुष्य का अज्ञान जल जाएगा, नहीं रहेगा। हो सकता है मनुष्य दूर भागे।

कबीर के वचनों में आग थी। पाखंड जल सकता था, अज्ञान जल सकता था, लोग पास नहीं आए। समझाने की बहुत कोशिश करते लेकिन जाना कुछ भी नहीं। इस प्रकार सब के सब कबीर के विरोध पर खड़े थे। चाहे वे हिन्दू थे, चाहे मुसलमान थे, चाहे मौलवी थे,

चाहे ब्राह्मण थे, सारा बनारस कबीर की विरोधता पर खड़ा हो गया। तो कहना पड़ेगा कि सारे बनारस में ऐसे आदमी थे। तंग आकर कबीर को कहना पड़ा कि मैं मुसलमान ही नहीं हूं तो विरोध क्यों करते हो? और मैं हिन्दू ही नहीं हूं मेरा पीछा छोड़ो। जब भी कोई परमात्मा को जान लेता है तो इस तरह का मज़हब उसका नहीं होता, क्योंकि परमात्मा का कोई मज़हब नहीं है।

धन्य गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के वचन मैं आपके सामने रखूं :

नमसतं अमजबे॥ नमसतसतु अजबे॥ १७॥

(जापु साहिब)

नमस्कार है तुझे। तेरा कोई मज़हब नहीं। हे परमात्मा! तू न हिंदू है, न तू मुसलमान है, न तू ईसाई है, न तू यहूदी है, न तू पारसी है, न तू जैनी है, न तू बौद्धी है। कलगीधर पिता कहते हैं कि मैं नमस्कार करता हूं तुझे। तेरा कोई मज़हब नहीं। जप करने वाला मनुष्य, साधना करने वाला मनुष्य धीरे-धीरे उससे कुछ छूटता है, वह त्यागता नहीं है। जैसे पतझड़ की ऋतु आए और एक-एक पत्ता गिरना शुरू होता है। प्रथम, पदार्थों की पकड़ नहीं रहती। पदार्थों को वह पकड़ेगा, पदार्थ उसे नहीं पकड़ेंगे। आगे चलकर परिवार की पकड़ भी नहीं रहेगी। चाहे परिवार उसको पकड़े, उसके अंदर परिवार की पकड़ भी नहीं रहेगी, उसके अंदर किसी अवतार, पीर, पैगंबर और अपने इष्ट की पकड़ भी नहीं रहेगी, वह भी छूट जाएगी। मनुष्य जो परमात्मा के साथ जुड़ने से असमर्थ रह गया है उसका माया चित्त लुभाती है। माया क्या? मैं अर्ज़ करूं। न मनुष्य को परमात्मा की समझ, न मनुष्य को माया की समझ। हर वह चीज़ माया है जो परमात्मा के मार्ग में रुकावट बने। वह कुछ भी हो सकता है। गुरु अरजन देव जी महाराज कहते हैं कि इष्ट भी माया है। जिसकी पूजा कर रहा है, जिसके सहारे तू इस मार्ग पर चला है, अब तू उसी को पकड़ कर रह गया है। यह बहुत क्रांतिकारी वचन हैं गुरु अरजन देव जी के। कुछ भी इष्ट हो सकता है। इष्ट तो दरवाज़े की तरह है और यदि दरवाज़े ने भी रोक लिया है, दर पर भी रुक गए तो घर से विहीन रह गए। अब दरवाज़ा

माया बन गया है। परिवार ने रोका तो परिवार माया, अवतार ने रोका तो अवतार माया, पदार्थों ने रोका तो पदार्थ माया, प्रभुत्ता ने रोका तो प्रभुत्ता माया। माया पसरी हुई है।

सुरति को जो ख़्याल रोक दे, माया है। माया कोई शक्तिशाली नहीं है। दरियाओं के बहाव मुट्ठी भर रेत से नहीं रुकते। ज़िंदगी के बहाव बहुत छोटी-छोटी बातों ने रोके हुए हैं। किसी की सुरति रुक गई है परिवार के कारण, पदार्थों के कारण, प्रभुत्ता के कारण, अपने इष्ट के कारण। मिलते हैं मुझे कई, फलां संत की बहुत बख़्शिश है हमारे पर। हमारे पास जो कुछ है उनका है। मिलता घर से है दर के द्वारा और कोई यह कहे, घर की बात नहीं है, हमें दर से ही मिला है। दरवाज़े ने दिया है तो दरवाज़ा माया बन गया। कई बार मनुष्य साधना के कारण परिवार से, प्रभुत्ता से तो ऊंचा उठ जाता है लेकिन इष्ट से ऊंचा उठना बहुत कठिन है। तो इष्ट माया है। इष्ट के कारण जो मज़हब मिला था, मज़हब माया है। किसी के लिए मुसलमान होना ही माया हो गया। इसलिए धन्य गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ऐलान करके कह दिया:

जो हम को परमेसर उचरिहैं॥
ते सभ नरक कुंड महि परिहैं॥

(बचित्र नाटक)

कुंभी नरक में जाएंगे, मामूली नर्क नहीं। बहुत दुख भोगेंगे। कौन? जो मुझे परमात्मा करके कहेंगे :

मो कौ दास तवन का जानो॥ या मै भेद न रंच पछानो॥३२॥
मै हो परम पुरख को दासा॥ देखन आयो जगत तमासा॥

अवतार परमात्मा का संदेश-वाहक है, अवतार निरंकार नहीं है :

अवतार न जानहि अंतु॥ परमेसरु पारब्रहम बेअंतु॥

(अंग ८९४)

ऐसी सीमा होती है। यदि अवतार छूटा नहीं तो अवतार भी माया बन गया। अवतार से मन इतना प्रभावित है कि बार-बार यही याद आता है। निरंकार तक तो सुरति जाती नहीं। यह अवतार माया हो

गया। परमात्मा के बिना कोई अन्य भी दे सकता है, कहीं ऐसा न हो तुझे भ्रम हो जाए। कब्रें पूजी जा रही हैं, पेड़ पूजे जा रहे हैं, पत्थर पूजे जा रहे हैं, मनुष्य पूजे जा रहे हैं, बहते दरिया पूजे जा रहे हैं। आश्चर्य है। ठीक है मेरे से कोई बड़ा है। उसकी बड़ी आयु का सत्कार करते हुए यदि मैं झुक गया तो आयु के कारण झुक गया, ठीक है। कोई अक्ल के कारण बड़ा हो सकता है, कोई गुणों के कारण बड़ा हो सकता है, पड़ गए पांव, यह गुरु नानक मना नहीं करते :

...पैरी पावणा जगि वरताइआ। २३। १।

(वार भाई गुरदास जी)

बल्कि गुरु नानक देव जी ने तो प्रथा चलाई कि जहां तू देखे, यह मेरे से आगे है, उसके पांव पड़ जा। कहते हैं, धर्म देखता है तो उसे देख जो तेरे से आगे है, ताकि तुझे तरस आए।

भक्त धन्ना ने तो ऐसा देखा था। कबीर है तो जुलाहा, लेकिन बहुत आगे चला गया। रविदास है तो चमार लेकिन बहुत आगे चला गया :

इह बिधि सुनि कै जाटरो उठि भगती लागा॥

यह बात सुन कर जट्ट भक्ति करने लग पड़ा कि जुलाहा भक्त बन गया, मैं क्यों नहीं हो सकता। ये मेरे से बहुत आगे चले गए हैं :

मिले प्रतखि गुसाईआ धंना वडभागा॥

(अंग ४८८)

यदि धन देखना है तो सदा उसको देख जो तेरे से पीछे है, ताकि अंदर अहंकार न पैदा हो। जो हमारे से आगे है उसके पांव पड़ना कोई गुनाह नहीं, पुन्य है।

करि साधू अंजुली पुनु वडा हे॥
करि डंडउत पुनु वडा हे॥१॥ रहाउ॥

(अंग १३)

लेकिन मैं पांव पड़ गया और मैंने खुदा समझ लिया। अब यह साधू मेरे लिए माया हो गया। आपको बहुत से मिलेंगे जिन्हें परिवार,

धन, पदार्थ ने तो नहीं रोका, आगे चले गए हैं, लेकिन इसी इष्ट ने रोक कर रख दिया और परम आनंद लेने से विहीन रह गए। महाराज कहते हैं कि देख उस सिक्ख को जो गुरु की विचार में तेरे से आगे है। कोई बात नहीं, उसके पांव पड़ जा:

जो दीसै गुरसिखड़ा तिसु निवि निवि लागउ पाइ जीउ॥

(अंग ७६३)

कहते हैं जो तेरे से पीछे हैं उसके पांव पड़ेगा तो पिछड़ जाएगा। लोग राजनेताओं के पांव पड़ते हैं तथा राजनेताओं से कोई झूठा होगा? झूठ के पांव पड़ते हैं, झूठे हो जाते हैं। झुकते समय सोच लेना मेरे से आगे है कि नहीं। जो पीछे हैं इन पर तरस करना चाहिए। ये जो पीछे हैं, इनकी सेवा करें, पांव पड़ने की आवश्यकता नहीं।

कहते हैं, महात्मा बुद्ध ने अपने चचेरे भाई से कहा था कि वह नदी को लांघ आया है और किनारे को पकड़ कर बैठ गया है। आनंद हाथ जोड़ कर कहता है, मैं नहीं समझा। भाई ! संसार, पदार्थ, परिवार, प्रभुत्ता यहां से तो तू निकल आया है और मुझे पकड़ कर बैठ गया है, इसे भी छोड़। जिसके साथ मोह हो वह गिराएगा। परिवार संयोग है प्रभु का। जैसे पैरों को चलना पड़ता है और चलने के लिए ज़मीन चाहिए, वैसे जीने के लिए परिवार चाहिए, जीने के लिए पदार्थ चाहिए, लेकिन मैं धरती को ही पकड़ कर बैठ जाऊं। धरती तो चलने के लिए है। फिर धरती मेरे लिए रुकावट हो गई। पता है, आनंद क्या कहता है कि इस किनारे से मुझे मिला बहुत कुछ है, बहुत समझ मिली है। भाई ! सुख तो तुझे पदार्थों से भी मिले हैं, सुख तुझे मां-बाप से भी मिले हैं, परिवार से मिले हैं। जैसे उनकी पकड़ नहीं है, आवश्यकता थी, उसी प्रकार छोड़ मुझे। नहीं तो याद रख, मैं माया बन जाऊंगा। नाव के द्वारा पार हुआ तो नाव सिर पर थोड़े उठाना है। फिर तो सारी ज़िंदगी नाव बंधन हो गई। जैसे ज़िंदगी के मार्ग पर मां-बाप मिल जाते हैं, बहन-भाई मिल जाते हैं, दोस्त-रिश्तेदार मिल जाते हैं, धन-सम्पदा मिल जाती है, उसी प्रकार ज़िंदगी के मार्ग में अवतार का मिलना, संत का मिलना भी बहुत ज़रूरी है।

औलाद न हो तो मां-बाप रोते हुए दिखाई देते हैं, तीर्थों पर भटकते हैं, आवश्यकता है। इसी तरह अवतार की आवश्यकता है, संत की आवश्यकता है, परंतु इसमें से जिसे भी पकड़ कर बैठ गए, वह माया है। मैं बहुत से देखता हूं कि संत ही माया बने बैठे हैं। संत किस लिए माया बन जाए, दीवार बन जाए तो समझ लेना बड़ा प्रबल अहंकार है। इसका संतपन तो ख़त्म होता जाएगा, रहेगा ही नहीं। आश्चर्य है, फिर अहंकार भी पूजा हा रहा है।

कबीर के वचनों में प्रताप है। ज़िंदगी बहुत प्रकाशमयी है। यह अंधेरे में रहने वालों को अच्छा लगा। कैसे पछाड़ें? तो पहले कबीर के आचार तथा चरित्र पर हमला करें। इल्ज़ाम लगा दिया कि दुराचारी है और घर में मोहरों की थैली रात को फेंक कर पुलिस भेज कर पकड़वा दिया कि चोर है। यह इतिहास है। यही दो ऐसे इल्ज़ाम हैं जो कबीर को पीछे कर देते हैं। समय की हकूमत थी सिकंदर लोधी की। इसका हृदय भी कई दिनों से परेशान था, क्योंकि यह लगभग दोनों से न्यारा हो गया था। यह शब्द अब आगे नहीं तो क्या है?

बुत पूजि पूजि हिंदू मूए तुरक मूए सिरु नाई॥

मर-मिट गए मुसलमान और मर-मिट गए पत्थर को पूज-पूज कर हिंदू।

ओइ ले जारे ओइ ले गाडे तेरी गति दुहू न पाई॥१॥
मन रे संसारु अंध गहेरा॥

(अंग ६५४)

ये दोनों अंधेरे में भटक रहे हैं। कबीर को कौन माफ करे? वचनों में इतनी सच्चाई, इतनी दलीलें। क्या हुआ यदि थोड़ी-बहुत-सी जुलाहों की जमात कबीर के इर्द-गिर्द इकट्ठी हुई, मगर देश नहीं इकट्ठा हुआ। यदि गुरु अरजन देव जी महाराज अपने सीने में जगह न देते तो सिक्ख जगत को भी कबीर का पता नहीं चलना था। कबीर का जन्म राज-घराने में नहीं हुआ और कबीर का जन्म धनाढ्य घर में भी नहीं हुआ, किसी ऊंची कुल में भी नहीं हुआ। मनुष्य पूजे जाते हैं धन के कारण, कुल के कारण, राज-घरानों के कारण। राजा ज्ञान की बात कहे अवतार

है, मगर एक जुलाहा ज्ञान की बात कहे तो झूठा है।

कबीर के वचन किसी भी अवतारी पुरुषों के बोलों से कम नहीं हैं। सिकंदर लोधी जैसा मूरख बादशाह, उसने हुक्म भी सुना दिया कि हाथी के पैरों के नीचे कुचल कर इसे मारो। अपनी औकात नहीं देखता, बहुत बोलता है। हाथी को शराब पिला दी और कबीर को उसके आगे बांध दिया। काज़ी सामने खड़ा है, सिकंदर लोधी सामने खड़ा है, ब्राह्मण सामने खड़े हैं और खुश हो रहे थे कि अब कैसे माथा मारेगा हमारे साथ। अब निकलेंगी इसकी चीखें, अब पश्चाताप होगा। इसने वचन रखे दुनिया के सामने :

हम घरि सूतु तनहि नित ताना कंठि जनेऊ तुमारे॥

(अंग ४८२)

तू धागा पहन कर ब्राह्मण हो गया है और धागा तो हम बनाते हैं, तो बनाने वाला बड़ा है कि पहनने वाला बड़ा है? हमने बनाया तो हम शूद्र और तूने गले में पहन लिया तो तू ब्राह्मण, यह कैसे? वचनों में क्रांति है। हाथी, घोड़ा, मोर, हंस, गऊ ये मनुष्य के बहुत नजदीक थे। यदि ये मरेंगे तो मनुष्य बनेंगे। यह पशु और मनुष्य की कड़ी हैं। उधर पशु की कड़ी टूटेगी, यह मनुष्य होंगे। इनमें समझदारी है। हाथी ने बंधे हुए कबीर को सूंढ़ से उठा लिया। महावत अंकुश मार रहा है कि पैरों के नीचे कुचले, लेकिन पता है हाथी ने मस्तक पर रख लिया कबीर को। फिर हाथी ने ज़मीन पर रख कर अपना मस्तक कबीर के चरणों पर रखा।

कुंचरु पोट लै लै नमसकारै॥

(अंग ८७०)

झुक गया। कुंचर का सिर नमस्कार कर रहा है। हे अंधे काज़ी! तेरे से तो हाथी नेत्रयुक्त है। चढ़ा गुस्सा सिकंदर लोधी को कि यह हाथी ऐसा कर रहा है, इसे उठा कर गंगा में फेंक दो। गंगा चढ़ी हुई थी। उठा कर गंगा में फेंका तो :

गंगा की लहरि मेरी टुटी जंजीर॥

(अंग ११६२)

लहरें आदमी को डुबोती हैं परंतु लहरों ने किनारे पर लगा दिया, जिसे एक उर्दू का शायर ज़ोक ऐसे कहता है :

सहारा न देतीं अगर मौजे-तूफां,
डुबो ही दिया था हमें नाखुदा ने।

यदि लहर मुझे किनारे पर न लाती, नाविका ने तो मुझे डुबो ही दिया था। लहरें डुबो देती हैं संसारियों को लेकिन लहरें ही किनारे लगा देती हैं भक्तों को। इस तरह का संघर्ष किया कबीर ने। शरीर ताकत खो बैठा है। रोज़-रोज़ का संघर्ष करना अब मुश्किल था तो कहने लगे, लोई! बाकी के चार दिन आराम से काट लें। बनारस छोड़ देना है। जिस दिन बनारस छोड़ा था कबीर ने तो ब्राह्मणों ने दीपमाला की थी कि एक पाखंडी निकला। मौलवियों ने खुशी मनाई और घी के चिराग जलाए कि एक काफिर निकला।

जब जाते हुए कबीर को कुछ लोगों ने कहा, जो ब्राह्मणों के हिमायती थे, भक्त जी! कहां चले हो? तो कबीर जी कहने लगे कि मगहर चले हैं। गोरखपुर शहर से १५ मील की दूरी पर यह शहर है। मगहर के बारे में ब्राह्मण कहते हैं कि जो वहां मरेगा, गधे की योनि में जाएगा। कबीर कहते हैं कि मुझे वहां ले जाओ जहां कम से कम ब्राह्मण तो नहीं जाएगा। अब बनारस के निवासी कहते हैं :

सगल जनमु सिव पुरी गवाइआ॥
मरती बार मगहरि उठि आइआ॥

(अंग ३२६)

सारी ज़िंदगी रहा बनारस हमारे सिर पर चढ़ कर, अब मौत आई है तो जा रहा है मगहर।

कासी मगहर सम बीचारी॥
ओछी भगति कैसे उतरसि पारी॥

(अंग ३२६)

चाहे बनारस छोड़ रहा है लेकिन अभी भी गालियां निकालने से बाज़ नहीं आ रहे। कहते हैं ओछा भक्त है। इसने बनारस तथा

मगहर को एक ही समझा हुआ है। कबीर लोई को संबोधित करते हुए कहते हैं :

कहतु कबीरु सुनहु रे लोई भरमि न भूलहु कोई॥
किआ कासी किआ ऊखरु मगहरु रामु रिदै जउ होई॥

(अंग ६९२)

कबीर ने अपना शरीर मगहर छोड़ा। जिन दिनों में दास देखने गया, समाधि बनी हुई है। एक ओर मौलवी बैठा है, एक ओर ब्राह्मण बैठा है। एक ओर इसका चढ़त-चढ़ावा ब्राह्मण उठाता है, दूसरी ओर मौलवी। रास्ता पहले समाध का वह आता है जहां ब्राह्मण बैठा है। फिर घूम कर दूसरी ओर मौलवी बैठा है। जब मैं गया तो मुझे देख कर ब्राह्मण कहने लगा, सरदार जी! ये भक्त कबीर जी की समाधि है और कबीर के गुण गाकर बताने लगा—वो यहां समाए थे। आपने यहां नज़राना रखना है, भेट रखनी है। मैंने कहा, ब्राह्मण देवता! तुमसे बेचारा तंग आकर यहां आया था, आपने यहां भी पीछा नहीं छोड़ा।

कहते हैं, कबीर धन्य गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज में बैठे हैं। धन्य गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज को हम इष्ट मानते हैं और इष्ट मानना हमारा तब स्वीकार हो सकता है यदि हम सिक्ख बनें। भक्त कबीर जी का आज का यह महावाक आप श्रवण करो :

रागु धनासरी बाणी भगत कबीर जी की

१ओं सतिगुर प्रसादि॥

वह परम शक्ति एक है। वह ओअंकार है, सत्य है, गुरु है। वह जो एक है, प्रसादि है, दयालु है, कृपालु है।

सनक सनंद महेस समाना॥

ब्रह्मा के चार लड़के हैं—सनक, सनंद, सनातन और सनत कुमार। ये चार लड़के ब्रह्मे के माने जाते हैं।

सेखनागि तेरो मरमु न जाना॥१॥

शेषनाग से अभिप्राय कहीं सांप न समझ लेना। एक ऋषि का नाम था। वह हर रोज़ परमात्मा का नया नाम जपता था। परमात्मा का

गुणात्मक नया नाम रख कर जपता था। कहते हैं, रोज़ रखते-रखते लगभग हज़ार दिनों में उसने हज़ार नाम तो रख लिए थे। बात यूं प्रचलित हो गई कि शेशनाग जी के हज़ारों मुंह हैं, हजारों फन हैं और हज़ारों जुबाने हैं। पहली बात, मनुष्य ही नहीं जपते, सांपों ने क्या जपना है। भक्त कबीर कहते हैं, शिव जी ब्रह्मे के चार लड़के और हर रोज़ नया नाम रखने वाला ऋषि शेशनाग भी प्रभु! तेरे मर्म को इसने नहीं जाना। तेरी पूरी समझ न ब्रह्मे के लड़कों के पास है न ही शिव जी के पास है। धन्य गुरु अरजन देव जी महाराज फ़रमान करते हैं :

ब्रहमा बिसनु महादेउ त्रै गुण रोगी विचि हउमै कार कमाई॥
जिनि कीए तिसहि न चेतहि बपुड़े हरि गुरमुखि सोझी पाई॥

(अंग ७३५)

सारी क्रिपा इन तीनों महापुरुषों के अहंकार पर खड़ी थी। इसलिए ममता नहीं मरी, पार्वती मर गई। यह ज़िंदा हो सके, कंधे पर उठाए फिरते थे। जहां-जहां पार्वती के अंग गिरे, उनको ये जोती लिंग कहते हैं, वहां-वहां शिवा के स्थान बने हैं।

संतसंगति रामु रिदै बसाई॥१॥ रहाउ॥

इस तरह हो सकता है, मनुष्य संत की संगत करे। राम हृदय में बस जाए तो सारे अवतार तथा इस तरह के साधना करने वाले, उनकी वास्तविकता प्रकट हो जाए।

हनूमान सरि गरुड़ समानां॥

हनुमान जैसे राम के सेवक, पुरुषार्थी भक्त तथा गरुड़, मेरी दृष्टि में गरुड़ भी कोई पक्षी नहीं है, किसी ऋषि का नाम है। इस ढंग से कोई गरुड़ का गुण होगा उस ऋषि में। जैसे हमें 'सिंघ' नाम दिया है और 'सिंघ' नाम की विशेषता है कि 'सिंघ' बहादुर होता है, शेर बहादुर होता है, शेर अपना रास्ता खुद चुनता है। ये सारे गुण जिसके अंदर हैं वह 'सिंघ' है। वैसे देखो 'सिंघ' एक पशु है।

सुरपति नरपति नही गुन जानां॥२॥

गरुड़ जैसे ऋषि, हनुमान जैसे सेवक तथा देवताओं के मुखिया

इंद्र और मनुष्यों के मुखिया राजा हैं। परिपूर्ण परमात्मा! तेरी हकीकत को यह नहीं जानते।

चारि बेद अरु सिंम्रिति पुराना॥

ये जो चार वेद हैं, इनके बारे में श्रीकृष्ण का भी ऐसा ख़्याल है कि हे अरजन! वेदों का विषय तीन गुना है। जगत की बात ज्यादा करते हैं, ग्रह-नक्षत्रों की बात ज्यादा है, वनस्पति की बात ज्यादा है, अन्य तरह-तरह के कर्मकांडों की बात ज्यादा है। श्रीकृष्ण जैसी आत्मा को कहना पड़ा कि अर्जुन! तू मेरी बात सुन। कबीर की बात इन चार वेदों ने, स्मृतियों ने तथा कुरानों ने परमात्मा की पूरी बात को नहीं जाना, तभी इतना कर्मकांड है।

कमलापति कवला नही जाना॥३॥

कमला लक्ष्मी ने भी नहीं जाना और लक्ष्मी का जो पति है विष्णु, उसने भी नहीं जाना।

कहि कबीर सो भरमै नाही॥

कबीर जी महाराज कहते हैं कि जो संत की शक्ल में रहता है वह इनके भ्रमों में नहीं पड़ता कि यह रब्ब है, यह रब्ब है। कबीर कहते हैं :

कोटि सूर जा कै परगास॥

करोड़ों सूर्य हैं। पहले यह बताओ, कौन से सूर्य को पानी दे रहे हो?

कोटि महादेव अरु कबिलास॥

(अंग ११६२)

करोड़ों शिवजी हैं, पहले फैसला करो किसके पुजारी हो? करोड़ों कमलापति हैं, विष्णु जैसे अनंत हैं, उस जैसे अनेकों हैं, पहले यह बताओ, कौन से विष्णु के पुजारी हो?

बावन कोटि जा कै रोमावली॥ रावन सैना जह ते छली॥

(अंग ११६३)

रावण की सेना का सत्यानाश कर दिया और जीत हासिल की।

कबीर कहते हैं, मैं राम भी करोड़ों देखता हूं। पहले फैसला करो कि किसके पुजारी हो? कबीर कहते हैं कि वह मनुष्य कभी भ्रम में नहीं पड़ता। कौन?

पग लगि राम रहै सरनांही ॥ ४ ॥ १॥

जो हर समय प्रभु के चरणों के साथ जुड़ा रहता है, रब्बी गुणों के साथ जुड़ा रहता है। यह रब्ब की असलियत जिसके सामने प्रकट होती है, उसके लिए कोई अवतार माया नहीं है, वह सीधा प्रभु के साथ जुड़ता है। वह अवतार को अवतार करके मानेगा, निरंकार करके नहीं। उसकी सुरति, वहां नहीं रुकेगी। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥

वाहिगुरु जी की फ़तह॥



सफलु जनमु भगता का कीता

सोरठि महला ३॥

गुरमुखि भगति करहि प्रभ भावहि अनदिनु नामु वखाणे॥
भगता की सार करहि आपि राखहि जो तेरै मनि भाणे॥
तू गुणदाता सबदि पछाता गुण कहि गुणी समाणे॥ १॥
मन मेरे हरि जीउ सदा समालि॥
अंत कालि तेरा बेली होवै सदा निबहै तेरै नालि॥ रहाउ॥
दुसट चउकड़ी सदा कूड़ु कमावहि ना बूझहि वीचारे॥
निंदा दुसटी ते किनि फलु पाइआ हरणाखस नखहि बिदारे॥
प्रहिलादु जनु सद हरि गुण गावै हरि जीउ लए उबारे॥ २॥
आपस कउ बहु भला करि जाणहि मनमुखि मति न काई॥
साधू जन की निंदा विआपे जासनि जनमु गवाई॥
राम नामु कदे चेतहि नाही अंति गए पछुताई॥ ३॥
सफलु जनमु भगता का कीता गुर सेवा आपि लाए॥
सबदे राते सहजे माते अनदिनु हरि गुण गाए॥
नानक दासु कहै बेनंती हउ लागा तिन कै पाए॥ ४॥ ५॥

(अंग ६०१)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ!

सोरठि राग के अंदर धन्य गुरु अमरदास जी महाराज का यह महान वाक है। इस शब्द में मैं देखता हूं कि धन्य गुरु अमरदास जी महाराज ने समूह प्रकृति के ब्रह्मांड के दो भाग बताए हैं। लीला तो हो सकती है यदि पार्टियां दो हों। अकेला मनुष्य क्या खेलेगा? विश्व को खेल कहते हैं, विश्व को तमाशा कहते हैं, विश्व को लीला कहते

हैं। यदि जगत लीला ही है, खेल है, तो परमात्मा ने भी यहां भाग दो ही बनाए हैं।

पहले तो यहां से शुरू करें कि समय को उस परिपूर्ण परमात्मा ने दो रूप दे दिए–दिन तथा रात। समय के एक भाग को कहते हैं दिन तथा दूसरे भाग को कहते हैं रात। दोनों के कारण समय जाना जाता है, एक के कारण नहीं। यदि केवल दिन ही दिन हो तो फिर समय को कैसे नापेंगे, रात ही रात हो तो फिर कैसे नापेंगे? दिन और रात समूह बह्मांड के जीवन में व्यापक है। यह बात अलग है कि कभी दिन बड़े हो जाते है, रातें छोटी हो जाती हैं, कभी रातें बड़ी हो जाती हैं, दिन छोटे हो जाते हैं। कितनी भी बड़ी रात हो जाए दिन तो रहता है। कितना भी बड़ा दिन हो जाए रात तो रहती है, नहीं तो लीला नहीं हो सकती। खेल में एक पार्टी हार जाती है, एक जीत जाती है। गर्मियों के दिन यूरोप में जब यहां रात के ११ बजे होते हैं वहां फिर भी प्रकाश होता है। हमारे यहां केवल ५ घंटे की रात रह जाती है और वहां अभी धूप मौजूद होती है। मां-बाप मासूम बच्चों को कहते हैं सो जाओ, क्योंकि सुबह स्कूल जाना है।

समय ने सारी लीला को भी बांटा हुआ है। ऐसी वनस्पति है जो रात के अंधेरे में खिलती है और दिन में मुरझा जाती है, जैसे रात की रानी। ज़्यादा फूल रात को ही खिलते हैं। बहुत से पेड़ अफ्रीका में हैं, उन्हें फूल, फल रात को लगते हैं तथा रात को वो पेड़ खुश दिखाई देता है, सवेरे तो मुरझाया होता है। परंतु ऐसी वनस्पति भी है जो दिन में ही खिलती है। सूरज चढ़े तो खिलते हैं। एक फूल को तो सूरजमुखी कहते हैं। जिस-जिस ओर सूरज हो वह अपना मुखड़ा उसी ओर कर लेता है। सूरज छिप गया तो वह मुरझा जाता है, पंखड़ियां बंद हो जाती हैं। इसी तरीके से सारी वनस्पति में इस ढंग से आधा भाग तो ऐसा है जो सूरज के साथ खिलता है। रात की रानी खिलती भी रात को है और महक भी रात को ही देती है। सारी वनस्पति दिन तथा रात में बंटी हुई है।

धन्य गुरु अमरदास जी का जो यह वाक आया है एक हिस्से में तो वे भक्तों की महिमा तथा भक्तों का गुण बयान करते हैं। दूसरे

हिस्से में दुष्टों तथा निंदकों की बात करते हैं। जैसे जपु जी साहिब में धन्य गुरु नानक देव जी महाराज एक भाग में तो कहते हैं :

असंख जप असंख भाउ॥
असंख पूजा असंख तप ताउ॥
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ॥

(अंग ३)

यह प्रकाश-पक्ष है, लेकिन रात भी है :

असंख मूरख अंध घोर॥
असंख चोर हरामखोर॥
असंख अमर करि जाहि जोर॥

(अंग ४)

वर्ष भर की औसत लगाएं तो दिन-रात बराबर हो जाते हैं। इसी तरह जितने गुरमुख होने चाहिए उतने मुनष्य भी होने चाहिए, जितने भक्त हों उतने दुष्ट तथा निंदक भी चाहिए। ये दोनों भाग धन्य गुरु अमरदास जी महाराज ने आज के इस पावन वाक में बयान किए हैं। एक-एक शब्द सागर की तरह है। ऐसा सागर है जो इतने रत्नों से भरा हुआ है, ढूंढते-ढूंढते ज़िंदगी खत्म हो सकती है, मोती नहीं ख़त्म होते। कुछ पशु अंधेरे-पक्ष के हैं। सांप रात को मस्ती करते हैं, बिच्छू रात को बिल में से निकलते हैं। शेर, चीते और भालू रात को शिकार पर निकलते हैं। मच्छर रात को दिखाई देते हैं, दिन में तो पता नहीं चलता। यह अंधेरा-पक्ष है लेकिन ज्यादा पशु ऐसे हैं जिनका सम्बंध दिन से जुड़ता है। घोड़े, गऊएं, हाथी ये रात के पक्ष के नहीं हैं, दिन-पक्ष के हैं।

इसी तरह से मानवी दुनिया में भी मैं देखता हूं, बहुत-से मनुष्य ऐसे हैं जो अंधेरे-पक्ष के हैं, बहुत-से मनुष्य प्रकाश-पक्ष के हैं। ऐसे अंधेरे-पक्ष के हैं कैसे पहचान करें? उन्होंने ही क्लबों, जूयेखानों, वेश्यालयों तथा शराबखानों को जन्म दिया। शायद आपको पता हो कि अमेरिका में दो शहर हैं। एक ही राज्य के अंदर इन दो शहरों की ज़िंदगी रात की है। शहर रात को जगमगाता है, जागता है। बहुत भीड़,

बहुत चहल-पहल। दिन में सन्नाटा होता है सड़कों पर, बाज़ार भी बंद हैं। सिक्ख संगतें इन शहरों में भी पहुंच गईं। दोनों स्थानों पर गुरुद्वारे भी बन गए हैं। प्रकाश-पक्ष के मनुष्यों ने मंदिरों को जन्म दिया, मठों को जन्म दिया, गुरुद्वारों को जन्म दिया, आश्रमों को जन्म दिया, ध्यान-साधना को जन्म दिया। इस तरह के केन्द्रों के दरवाज़े अमृत वेले खुलते हैं। तब से कीर्तन की धुन उठती है। एक के दरवाज़े सुबह खुलते हैं और रात को बंद हो जाते हैं।

किसी हद तक उस परिपूर्ण परमात्मा ने मानवता के भी दो रूप बना दिए। इन दोनों रूपों में कहीं कोई अंधेरा-पक्ष है, कहीं कोई प्रकाश-पक्ष है। जितनी गिनती में लड़के पैदा होते हैं, मेरे पढ़ने में आया है कि १० प्रतिशत लड़कियां। ये १० प्रतिशत लड़के ज्यादा पैदा होते हैं वनस्पति लड़कियों के, लेकिन औसत बराबर होती है। १० लड़के रुखसत हो जाते हैं। वे कहते हैं संतुलन है। स्त्री के शरीर में २४ अणु पिता के, २४ अणु माता के, संतुलन है। असंतुलन शरीर है पुरुष का। २४ अणु पिता के तो हैं मां के २३ हैं। यह संतुलन होना चाहिए। हर तरफ की भागदौड़, खोज एवं व्याकुलता मनुष्य में दिखाई देती है, क्योंकि असंतुलित है, लेकिन औसत बराबर रहती है। तो जितने भक्त पुरुषों में हों, उतनी भक्तनियां स्त्रियों में होनी चाहिए। यहां औसत बराबर नहीं है। इतनी बड़ी हिंदू कौम, भक्त तो हज़ारों मिलते हैं लेकिन एक ही भक्तनी मीरा मिलती है, उसका जिक्र करते हैं। इस्लामी जगत में तो पीर-फकीर, पैगंबरों की बड़ी लम्बी-चौड़ी गिनती है, लेकिन पीर-फकीर स्त्री जगत में तो एक ही मिलती है, राबिआ। ऐसा क्यों है? जब संतुलित है स्त्री, यह पुरुष से ज्यादा विकासशील होनी चाहिए थी प्रत्येक पक्ष में।

पुरुष ने अपने आप को प्रधान मान लिया कि शारीरिक बल स्त्री से पुरुष में ज्यादा है। मानसिक बल, सहन-शक्ति पुरुष से स्त्री में ज्यादा है, बहुत कुछ सहन कर जाती है, जबकि पुरुष नहीं सहन कर सकता, क्योंकि मनुष्य थोड़ा सा शारीरिक बल भी रखता है और मानसिक कठोरता भी रखता है। इसने समानता पर होने नहीं दिया।

हैरान हूं, धन्य गुरु अमरदास जी महाराज ने २२ मंजियां (प्रचार

केंद्र) बख़्शिश कीं। १९ तो पुरुष हैं, स्त्रियां तो केवल तीन हैं। यदि २२ थीं तो ११, ११ होनी चाहिए थीं। स्त्रियों में इस ढंग की स्त्रियां केवल तीन ही मिलीं। उन्होंने २२ मंजियां बख़्शिश कीं। ऊंचे बैठें, विचार जो सुनानी है। एक संगत सारी दिखाई दे, दूसरा विचार जो परमात्मा की है, इसे सत्कार देना है। लेकिन तीन ही स्त्रियां हैं। औसत तो बिलकुल थोड़ी है। इसमें अनेकों कारणों में से एक यह कारण है कि पुरुष की कठोरता ने हमेशा कदम रोके हैं स्त्री के, इसे विकसित नहीं होने दिया। कीर्तन ज़रा आसान है, इसलिए कुछ रागी जत्थे स्त्रियों के हैं, लेकिन प्रचारक कोई नहीं। वैसे परमात्मा ने बराबर ही पैदा किए हैं लेकिन यह बराबरी दिखाई नहीं देती।

ख़ानाजंगी के कारण अरब में नौजवान बहुत सारे मारे गए थे, घर-घर में स्त्रियां ही रह गई थीं, बच्चे रह गए। पुरुषों में जो बूढ़े थे वे बच गए या छोटे-छोटे मासूम बच्चे। मुहम्मद साहब के सामने एक मसला खड़ा हुआ। घर-घर में बच्चियां बड़ी हो गईं। गिनती ज़्यादा, लड़के हैं नहीं। एक-एक को चार-चार निकाह करने की आज्ञा दी ताकि औसत बराबर हो जाए। मुहम्मद साहब ने एक आदर्श रखा। ४० वर्ष की खतीजा थी और २५ वर्ष के खुद थे, विवाह किया। न देखो उम्र, सामाजिक मसला हल करो। मुहम्मद साहब पर इल्ज़ाम लागू नहीं होता।

कुछ मनुष्य अंधेरे पक्ष के होते हैं, कुछ मनुष्य प्रकाश-पक्ष के होते हैं। अंधेरे-पक्ष के पुरुषों में भी होते हैं, अंधेरे-पक्ष के स्त्रियों में भी होते हैं। प्रकाश-पक्ष के स्त्रियों में भी होते हैं और प्रकाश-पक्ष के पुरुषों में भी होते हैं। लेकिन प्रकाश-पक्ष की स्त्रियों को रोका गया। पुरुष की कठोरता ने रोका। साहित्य, कला, ज्ञान, विज्ञान उसमें उन्नति नहीं होने देता। वेदों का पाठ आज भी स्त्री नहीं कर सकती मनू स्मृति के विधान के अनुसार। स्त्री आज भी मस्जिद में नहीं जा सकती। जनेऊ केवल पुरुषों के लिए है स्त्रियों के लिए नहीं है। इससे पता चलता है कि पुरुष की कठोरता ने कदम-कदम पर रुकावटें खड़ी की हैं कि कहीं समानता पर न आ जाए, जबकि कुदरत ने बराबर ही पैदा किए हैं। जब गिनती में बराबर हैं तो फिर क्यों रोकते हैं? गुणों में

भी बराबर हो सकती हैं, लेकिन नहीं आईं। यह समाज प्रधान अपने आप को हमेशा पुरुष ने समझा, इसने रोका। लगता है धन्य गुरु अमरदास जी महाराजा को भी इस तरह अधिक स्त्रियां नहीं मिली थीं, नहीं तो शायद ११-११ की बांट करते।

धन्य श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अंदर भक्त बैठे हैं, इस स्तर की एक भी भक्तनी न हुई। इसमें कोई स्त्री की निषेधता नहीं है, इसका कमज़ोरपन नहीं है। पुरुष का प्रधान होने का नारा और उसकी कठोरता, उसने ऐसा होने नहीं दिया। भक्त जो भगवान का रूप हो गए। यात्रा मनुष्य की श्रद्धा तक होती है। हर हालत में बड़ा गुरु को मानना होता है और हर हालत में गुरु की माननी होती है। तू बड़ा है, लेकिन अहंकार इतना बड़ा हो गया मनुष्य का, बड़ा तो मां-बाप को मानना भी कठिन हो गया है तो गुरु को कौन माने? उस्ताद को भी बड़ा मानना कठिन हो गया है। अहंकार छोटे को देखकर खुश होता है।

दूसरा नुक्ता ध्यान से सुनना। अहंकारी कमज़ोर हो तो दूसरे को छोटा करता है निंदा के कारण। अहंकारी ताकतवर हो तो दूसरे को मिटाता है हिंसा के कारण। निंदा भी अहंकारी करते हैं, हिंसा भी अहंकारी करते हैं। निंदकों का, दुष्टों का एक पक्ष में जिक्र करते हैं गुरु अमरदास जी महाराज, परंतु पहले भक्तों का प्रकाश-पक्ष। यदि बुद्धिमान बेशुमार हैं तो मूर्ख भी बेशुमार हैं, यदि दयालु बेशुमार हैं तो हिंसक भी बेशुमार हैं। जब भी कोई निंदा करने वाला मिले, पहचान हो गई कि अंधेरे-पक्ष का मनुष्य है। जब कोई परोपकार करता मिले, जब कोई दया की मूर्ति मिले तो समझ लेना यह प्रकाश-पक्ष का मनुष्य है। दिन को हम देखते हैं, रात को हम देखते हैं।

मनुष्यों में कोई रात की तरह मिलते हैं, कोई दिन की तरह। रात में भी हमने जीना होता है और दिन में भी हमने जीना होता है। मूर्ख कठोर मिल गया है तो फिर क्या करें? मस्त हुए रहें :

मूरखै नालि न लुझीऐ॥

(अंग ४७३)

न झगड़, एक तरफ होकर खामोश हो जा। अंधेरे के साथ

झगड़ेगा? सो जा, न लड़। प्रकाश है, इसके साथ व्यवहार कर, इससे कुछ सीखना शुरू कर। प्रकाश-पक्ष, अंधेरा-पक्ष, यह हम मनुष्यों में देखते हैं, बस, देखने का ढंग हो। यह देखा है गुरु नानक ने, तभी दोनों के रूप हमारे सामने रखते हैं। यत्न करो, रात नहीं खत्म होगी, जीना पड़ेगा ज़्यादा से ज़्यादा। दीपक जला कर हम प्रकाश कर सकते हैं, लेकिन सारी दुनिया में अंधेरा नहीं मिटा सकते। प्रभु का नाम जप कर अपने हृदय को रोशन कर सकते हैं, समूह विश्व में से मूर्खता नहीं खत्म कर सकते।

कहीं-कहीं रात इतनी बलवान थी कि उन्होंने दिन को सूली पर भी टांग दिया। रात मिटाई नहीं जा सकती। चींटी ने क्या किसी का रास्ता रोकना है? हाथी रास्ता रोक सकता है तो हिंसा के कारण मिटाना है हाथी को। यदि कमजोर है तो कह देना यह हाथी किसी काम का नहीं। भक्त का रूप क्या होता है? बुरा नहीं, सब भला ही है रे। हार नहीं, सब देखो। हे प्रभु! सब ठीक है। हम दिन में भी जी लेंगे, रात में भी जी लेंगे, दिन में कार-विहार कर लेंगे, रात में सो जाएंगे। कोई बात नहीं, तेरी रात का इस्तेमाल भी कर लेंगे, भक्तों की संगत भी कर लेंगे, मूर्खों से बच जाएंगे, सतसंग में बैठ जाएंगे, कुसंगत से एक ओर हो जाएंगे। इसे कहते हैं भक्त। ये दो पक्ष गुरु अमरदास जी महाराज ने बयान किए हैं। आप श्रवण करें:

सोरठि महला ३॥

गुरमुखि भगति करहि प्रभ भावहि
अनदिनु नामु वखाणे॥

जो गुरु को मुख्य रखता है, दिन-रात भक्ति करता है, पता है भक्ति कैसे करता है? दिन-रात प्रभु का नाम जपता है, दिन-रात रसना से प्रभु का नाम जपता है, ताकि ज़ुबान पर बैठा यह प्रभु उसके हृदय में बस जाए। भोजन का टुकड़ा पहले मुंह में ही लाना पड़ेगा, खून तो बाद में बनेगा, लेकिन कोई कहे, नहीं, पहले खून बने, पहले मास बने, भोजन का टुकड़ा मैंने बाद में मुंह में डालना है। पहले मुझे रस तथा प्रकाश का पता चले, नाम मैं बाद में जपूंगा। पहले मेरा मन टिकना

चाहिए, नाम मैं बाद में जपूंगा। कौन बताए, जपते-जपते एक दिन मन टिक जाता है। टिक जाना तो फल है। यह जो कहते हैं कि हृदय शुद्ध करके सतसंग में जाओ, गुरुद्वारे जाओ, गलत कहते हैं। मन निर्मल करके गुरुद्वारे जाओ। हाथ-पैर कैसे निर्मल कर लोगे? गुरु के बिना कैसे निर्मल कर लोगे?

धार्मिक जगत में ये दो शब्द इस्तेमाल किए जाते हैं। सतसंग में जाओ ताकि मन निर्मल हो, गुरुद्वारे जाओ ताकि हृदय शुद्ध हो। दूसरा, मन को स्थिर कर कीर्तन करो, मन को टिकाकर बाणी पढ़ो, गलत है। बाणी जपो ताकि मन टिक जाए, कीर्तन सुनो मन टिक जाए। मन का टिक जाना तो फल है। फल पहले कैसे होगा? जपा हुआ नाम भी एक दिन महारस बन जाता है। जो गुरमुख हैं, गुरु को सामने रख कर दिन-रात भक्ति करते हैं। कैसे करते हैं? नाम जपते हैं दिन-रात रसना के साथ।

भगता की सार करहि आपि राखहि
जो तेरै मनि भाणे॥

(अंग ६०१)

भक्तों को सम्मान, आदर, गले मिलना तू खुद करता है, क्योंकि वे तेरे मन को अच्छे लगते हैं। जो अच्छा लगा है, भक्त है। भक्त के शाब्दिक अर्थ हैं–भाव अंकित। भावना टिक गई है। अब किसी भी कीमत पर उनकी श्रद्धा को भुलाना कठिन है। श्रद्धा तक मनुष्य ने पहुंचना है। श्रद्धा भक्ति बन जाती है। भक्त भक्ति को भगवान बना देती है :

नामे नाराइन नाही भेदु॥ (अंग ११६६)

नारायण के दर्शन करने हैं तो नामदेव के दर्शन कर :

राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी॥

(अंग ९६९)

राम के दर्शन करने हैं तो फिर कबीर के दर्शन कर। हमने अरदास में ये शब्द जोड़ें हैं–'सेई संत गुरमुख पिआरे मेल हे प्रभु! जिन्हां-मिलिआं तेरा 'नाम' चेते आवे।' मंदिर, गुरुद्वारे क्यों जाते हैं,

'नाम' याद आए। 'नाम' जहां टिक गया, उसे देखकर भी 'नाम' याद आता है :

जिन्हा दिसंदड़िआ गुरमति वंञै मित्र असाडड़े सेई॥

(अंग ५२०)

ये भक्त परमात्मा को पसंद आ जाते हैं और इनके अंदर भावना अंकित हो जाती है, ये भक्त हैं।

तू गुणदाता सबदि पछाता गुण कहि गुणी समाणे॥१॥

यह सूझ उन्हें शब्द से प्राप्त होती है। गुणों का उच्चारण करते-करते उस गुणी में, उस प्रभु में समा जाते हैं अर्थात् गुणों का उच्चारण करते हुए गुणवान बन जाते हैं। किसी पहलवान की महिमा गायन करने से कोई पहलवान नहीं होता, किसी हुक्मरान की महिमा गायन करने से कोई हुक्मरान नहीं होता, किसी धनवान की महिमा गायन करने से कोई धनवान नहीं होता, लेकिन भगवान की महिमा गायन करने से भगवान ही हो जाता है।

मन मेरे हरि जीउ सदा समालि॥

हे मेरे मन! तू हर समय ऐसे पूर्ण परमात्मा की संभाल कर, याद कर, हर दिन याद कर।

अंत कालि तेरा बेली होवै सदा निबहै तेरै नालि॥ रहाउ॥

जितने तेरे संगी-साथी हैं, जीवन के हैं और जीवन में भी तब तक साथी हैं जब तक उनके स्वार्थ की पूर्ति हो। गुरु तेग बहादर महाराज जी साफ कहते हैं, यदि मनुष्य कहे कि वह मेरा साथी है, वह मेरा साथी है तो बिलकुल गलत है :

सुख मै बहु संगी भए दुख मै संगि न कोइ॥

(अंग १४२८)

सब सुख के साथी हैं। जिस दिन तेरे पास से दुख मिला, उनको तू चिराग लेकर भी ढूंढेगा तो नज़र नहीं आएंगे, लेकिन एक परमात्मा ही है जिसका हमारे साथ कोई स्वार्थ नहीं। जीवन में तो साथी है, जीवन के अंत के बाद भी वही साथी है। जो आदि-अंत का रखवाला है, तू उसे साथी न बनाना और जो सब स्वार्थ के साथी हैं उनको

तू मित्र बनाना। परमात्मा का नाम तेरी रसना पर न हो, हृदय में भावना न हो तो साहिब कहते हैं, वह आदि-अंत का साथी है।

दुसट चउकड़ी सदा कूड़ु कमावहि ना बूझहि वीचारे॥

सच की विचार को यह दुष्ट-चौकड़ी नहीं समझती, सदा झूठ बोलती है और झूठ कमाती है। कूड़ में भी व्यवहार और कूड़ (झूठ) को भी सच के गहने पहनाए जा सकते हैं। गुरु नानक देव जी महाराज कहते हैं :

मुखि झूठ बिभूखण सारं॥

(अंग ४७०)

बिभूखण कहते हैं गहनों को। यदि झूठ को शृंगारें न, तो नहीं चलता, क्योंकि झूठ कुरूप बहुत है, बदसूरत है।

निंदा दुसटी ते किनि फलु पाइआ हरणाखस नखहि बिदारे॥

साहिब यहां फ़रमान करते हैं कि इस निंदा के कारण किसने सुख प्राप्त किया है? हिंसा में किसे सुख मिला है? कर्म बदले जा सकते हैं, संस्कार बदले जा सकते हैं, लेकिन स्वभाव नहीं बदला जा सकता। निंदा अभी कर्म है। यह मनुष्य अभी छोड़ देगा सतसंग में कथा-कीर्तन सुन कर। यदि संस्कार भी बन गए हैं तो मिट जाएंगे कीर्तन सुन कर। परंतु स्वभाव बन गया है। जिसका स्वभाव बन गया है, गुरु नानक की पंक्ति मैं आपको सुनाऊं:

अवखध सभे कीतिअनु

हे परमात्मा! सभी बीमारियों की तूने जड़ी-बूटियां पैदा की हैं, लेकिन प्रभु! आश्चर्य है कि एक बीमारी का इलाज तूने भी नहीं पैदा किया। पूछते बाबा जी से वह कौन-सा रोग है? मैं अर्ज़ करूं, लाइलाज कोई रोग नहीं है। यह बात अलग है कि जड़ी-बूटी का पता न हो। भाई गुरदास जी कहते हैं कि जैसे वैद्य के बिना औषधि के गुण प्रकट नहीं होते, वही प्रकट करता है। हर रोग का इलाज है, परंतु साहिब कहते हैं इस बीमारी का इलाज नहीं। वह कौन-सी?

अवखध सभे कीतिअनु निंदक का दारू नाहि॥

(अंग ३१५)

क्योंकि निंदा रस बन गई है। साहिब कहते हैं कि इस तरह निंदा में वह दिन-रात लीन रह कर, झूठ बोल कर अपना व्यवहार इस तरह चलाते हैं।

प्रहिलादु जनु सद हरि गुण गावै हरि जीउ लए उबारे॥ २॥

जो भक्त-जन हैं, दिन-रात के गुण गाते हैं, दिन-रात प्रभु की संभाल करते हैं।

आपस कउ बहु भला करि जाणहि मनमुखि मति न काई॥

लेकिन जो मनमुख हैं कोशिश उनकी होती है कि हम भले हैं, हम महान हैं। दूसरा तुच्छ है, दूसरा कुछ नहीं है। इस तरह मनुष्य के पास दैवी समझ नहीं होती।

साधू जन की निंदा विआपे जासनि जनमु गवाई॥

अपना जन्म गंवा लेते हैं, साधुओं की निंदा करते हैं, महापुरुषों की निंदा करते हैं, गुरमुखों की निंदा करते हैं।

राम नामु कदे चेतहि नाही अंति गए पछुताई॥ ३॥

आखिर में पश्चाताप करते हैं, क्योंकि कभी राम-नाम का जप नहीं करते।

सफलु जनमु भगता का कीता गुर सेवा आपि लाए॥

गुरु ने जिन्हें अपने साथ जोड़ा है, अपनी सेवा में लगाया है, उनके जीवन को सफल कर दिया है अर्थात् भक्तों का जीवन सफल है, संसार में आया सफल है, उनकी जीवन-यात्रा सफल है।

सबदे राते सहजे माते अनदिनु हरि गुण गाए॥

दिन-रात प्रभु के गीत गाते हैं। अडोल अवस्था में रह कर, नाम के रंग में रह कर अपना जीवन व्यतीत करते हैं।

नानक दासु कहै बेनंती हउ लागा तिन कै पाए॥ ४॥ ५॥

धन्य गुरु अमरदास जी महाराज फ़रमान करते हैं कि हे प्रभु! मेरी विनती है कि इस तरह के भक्त जो दिन-रात सहज अवस्था में रहते हैं, नाम के रंग में रहते हैं, बस, मैं उनके चरणों के साथ जुड़ा रहूं, उनके चरण-स्पर्श को प्राप्त करता रहूं।

साहिब कृपा करें! हम प्रकाश-पक्ष के बनें और ज़िंदगी में कभी अंधेरा आ भी जाए तो नाम का दीपक जलाकर अपने में रोशनी कर लें। रात तो रहेगी लेकिन हृदय का दीपक जलाकर, जप कर अपने हृदय के स्तर पर प्रकाश किया जा सकता है। अपने दिल का दीपक जलाओ। भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥

वाहिगुरु जी की फ़तह॥



साचा साहिबु विसरिआ

सोरठि महला ५ ॥

मात गरभ दुख सागरो पिआरे तह अपणा नामु जपाइआ ॥
बाहरि काढि बिखु पसरीआ पिआरे माइआ मोहु वधाइआ ॥
जिस नो कीतो करमु आपि पिआरे तिसु पूरा गुरू मिलाइआ ॥
सो आराधे सासि सासि पिआरे राम नाम लिव लाइआ ॥ १ ॥
मनि तनि तेरी टेक है पिआरे मनि तनि तेरी टेक ॥
तुधु बिनु अवरु न करनहारु पिआरे अंतरजामी एक ॥ रहाउ ॥
कोटि जनम भ्रमि आइआ पिआरे अनिक जोनि दुखु पाइ॥
साचा साहिबु विसरिआ पिआरे बहुती मिलै सजाइ ॥
जिन भेटै पूरा सतिगुरू पिआरे से लागे साचै नाइ ॥
तिना पिछै छुटीऐ पिआरे जो साची सरणाइ ॥ २ ॥
मिठा करि कै खाइआ पिआरे तिनि तनि कीता रोगु ॥
कउड़ा होइ पतिसटिआ पिआरे तिस ते उपजिआ सोगु ॥
भोग भुंचाइ भुलाइअनु पिआरे उतरै नही विजोगु ॥
जो गुर मेलि उधारिआ पिआरे तिन धुरे पइआ संजोगु ॥ ३ ॥
माइआ लालचि अटिआ पिआरे चिति न आवहि मूलि ॥
जिन तू विसरहि पारब्रहम सुआमी से तन होए धूड़ि ॥
बिललाट करहि बहुतेरिआ पिआरे उतरै नाही सूलु ॥
जो गुर मेलि सवारिआ पिआरे तिन का रहिआ मूलु ॥ ४ ॥
साकत संगु न कीजई पिआरे जे का पारि वसाइ ॥
जिसु मिलिऐ हरि विसरै पिआरे सुो मुहि कालै उठि जाइ ॥

मनमुखि ढोई नह मिलै पिआरे दरगह मिलै सजाइ ॥
जो गुर मेलि सवारिआ पिआरे तिना पूरी पाइ ॥ ५ ॥
संजम सहस सिआणपा पिआरे इक न चली नालि ॥
जो बेमुख गोबिंद ते पिआरे तिन कुलि लागै गालि ॥
होदी वसतु न जातीआ पिआरे कूड़ु न चली नालि ॥
सतिगुरु जिना मिलाइओनु पिआरे साचा नामु समालि ॥ ६ ॥
सतु संतोखु गिआनु धिआनु पिआरे जिस नो नदरि करे ॥
अनदिनु कीरतनु गुण रवै पिआरे अंम्रिति पूर भरे ॥
दुख सागरु तिन लंघिआ पिआरे भवजलु पारि परे ॥
जिसु भावै तिसु मेलि लैहि पिआरे सेई सदा खरे ॥ ७ ॥
संम्रथ पुरखु दइआल देउ पिआरे भगता तिस का ताणु ॥
तिसु सरणाई ढहि पए पिआरे जि अंतरजामी जाणु ॥
हलतु पलतु सवारिआ पिआरे मसतकि सचु नीसाणु ॥
सो प्रभु कदे न वीसरै पिआरे नानक सद कुरबाणु ॥ ८ ॥ २ ॥

(अंग ६४०)

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥
वाहिगुरु जी की फ़तह॥

सम्मानयोग्य गुरु-रूप साधसंगत जीउ !

रहाउ की पंक्ति

"मनि तनि तेरी टेक"

इसके इर्द-गिर्द आठ पदे हैं। यह ख़्याल सतिगुरु महाराज की दृष्टि में इतना प्रबल था कि एक पदे से पूरा करना मुनासिब नहीं था। एक कमज़ोर मनुष्य परमात्मा का सहारा इसलिए पकड़ता है क्योंकि उसके पास परमात्मा के बिना अन्य कोई आसरा है नहीं। वह अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए, इच्छाओं की पूर्ति के लिए परमात्मा को आधार बनाता है। परमात्मा को आधार बनाता है परमात्मा के कारण नहीं, परमात्मा को सहारा बनाता है परमात्मा की महिमा के कारण नहीं,

बल्कि अपनी ख़्वाहिश की पूर्ति के कारण।

एक ताकतवर मनुष्य परमात्मा को इंकार कर देता है। क्यों? वह भी अपनी ख़्वाहिशों की पूर्ति के लिए इंकार करता है। क्यों इंकार करता है? परमात्मा निरवैर है, परमात्मा दयालु है। उसकी कुछ ख़्वाहिशें ऐसी हैं जो निरवैरता के साथ नहीं पूरी हो सकतीं। वे परमात्मा को तो अपने मार्ग में रुकावट समझते हैं। उसकी कुछ ख़्वाहिशें ऐसी हैं कि दया से पूर्ति नहीं हो सकती। उस दयालु को मार्ग की रुकावट समझता है। उसकी कुछ इच्छाएं ऐसी हैं जो परमात्मा के कारण पूरी नहीं हो सकतीं। क्यों? परमात्मा तो संतुष्ट है। यदि वह संतोष धारण कर ले तो उसकी इच्छाएं हैं, उसकी वाशनाएं हैं, फिर उसके पास ताकत है।

यदि हिटलर परमात्मा को मान लेता तो क्या वह ढाई करोड़ आदमियों का कत्ल कर सकता था? चंगेज़ खां यदि परमात्मा को सामने रखता तो क्या वह बस्तियों को उजाड़ सकता था? यदि औरंगज़ेब खुदा को सामने रखता तो क्या अपने भाइयों का कत्ल कर सकता था? अपनी बहन को जेल में बंद रख सकता था? एक ताकतवर मनुष्य परमात्मा को इंकार कर देता है। उसकी जो वाशनाएं हैं, इच्छाएं हैं, यदि परमात्मा है तो फिर पूरी नहीं कर सकता। दया रास्ता रोकेगी, संतोष रास्ता रोकेगा, तो परमात्मा ने रोका है। परमात्मा निरवैर है, परमात्मा संतुष्ट है, परमात्मा दयालु है। परमात्मा के गुणों ने रास्ता रोका है। फिर होता क्या है? धर्म कमज़ोर मनुष्यों के पास रह जाता है। कमज़ोर मनुष्य समझता है कि मेरी इच्छा परमात्मा के बिना पूरी हो ही नहीं सकती। धन का बल भी नहीं, बाहुबल भी नहीं, प्रभुत्ता का बल भी नहीं तो इच्छा की पूर्ति कैसे करूं?

यह कमज़ोर मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए परमात्मा को मानता है। एक ताकतवर मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए परमात्मा को इंकार कर देता है। एक का मानना मज़बूरी है, एक का न मानना भी मज़बूरी है। परमात्मा की बात नहीं इच्छाओं की बात है। यही कारण है कि शक्ति-सम्पन्न मनुष्य धार्मिक साधना करते नहीं मिलेंगे। धर्म कमज़ोर लोगों के पास रह जाता है और फिर देखा गया है कि ज़्यादा चलता नहीं।

धन्य गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज ज़फ़रनामा की बाणी में कहते हैं कि फेरता होगा तू तसवी, खुदा के लिए नहीं अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए, पढ़ता होगा तू नमाज़, खुदा के लिए नहीं, रखता होगा तू रोज़े, खुदा के लिए नहीं। तू खुदाप्रस्त नहीं। यदि परमात्मा को जानता और पहचानता तो वह तो दया था। फिर तू तीन भाइयों का कत्ल नहीं कर सकता था। यदि तू परमात्मा को जानता और पहचानता तो अपने बूढ़े बाप को जेल में तड़पा-तड़पा कर नहीं मारना था। तू नहीं जानता। खुदा-शनास मनुष्य कभी किसी के दिल को ख़राश नहीं पहुंचाता। यदि ह्रण्यकश्यप जैसा मनुष्य निरंकार को माने तो जो-जो उसने ज़ुल्म किए और विशेषतः अपने ही बच्चे पर, क्या वह कर सकता था? तेरा अमृत वेले उठना पाखंड है। एक नहीं तू हज़ार कसमें भी कुरान की खाए तो हो सकता है कोई भारतवासी भरोसा कर ले, मैं नहीं कर सकता। तू झूठा, तेरी कुरान की तलावत झूठी, इसलिए तेरी कुरान की कसम भी झूठी।

अपने स्वार्थ के लिए परमात्मा की आवश्यकता है, धर्म की आवश्यकता है। 'रहाउ' की पंक्ति में सतिगुरु यही कह रहे हैं कि हे प्रभु! मुझे तो केवल तेरी टेक है। मैं मन और तन के कारण केवल तेरा आसरा पकड़ता हूं। कहीं मनुष्य दिल से एक बार परमात्मा को आधार बना ले, ज़िंदगी में कभी बेसहारा नहीं होता, क्योंकि बाकी जो-जो सहारे पकड़ेगा, आज हैं, कल नहीं हैं। आज सम्बंधी हैं, कल कोई नहीं। लेकिन परमात्मा तो है, इसलिए है। ऐसा जो परमात्मा निरंकार दयालु है उस समर्थ पर भरोसा नहीं बंधता, कमज़ोरों पर भरोसा बंध जाता है। फिर दिल से मनुष्य उसका आधार नहीं पकड़ता। गुरु अरजन देव जी महाराज आठ पदों में हमें समझाने की कोशिश करते हैं। आप श्रवण करो!

सोरठि महला ५॥

मात गरभ दुख सागरो पिआरे तह अपणा नामु जपाइआ॥

विज्ञान ऐसा मानती है कि गर्भ दुख है। दूसरी बात अभी विज्ञान ने नहीं मानी कि उस गर्भ में बच्चा सिमरन करता है।

मात गरभ महि आपन सिमरनु दे तह तुम राखनहारे॥
पावक सागर अथाह लहरि महि तारहु तारनहारे॥

(अंग ६१३)

फिर प्रभु सिमरन देता है। वह सिमरन का सदका बचता है। वह अचेत है, जिसकी अभी बुद्धि काम नहीं करती। वह अचेत है जिसकी अभी ज्ञान-इन्द्रियां काम नहीं करतीं। जिसके लिए अभी वे सारे बेरूनी दरवाज़े बंद हैं। यह उसका चिंतन करता है, ऐसा विज्ञान ने नहीं माना। भारत के सभी संतों ने माना है कि गर्भ काल का बच्चा ब्रह्मज्ञानी है। चाहे दुष्ट मां की गोद में है, चाहे भक्त मां की गोद में हैं, ब्रह्मज्ञानी है। यह परमात्मा की मर्जी है, उसकी रहमत है।

एक ब्रह्मज्ञानी नाम जपते-जपते विचारों से रहित हो जाता है, इसलिए बच्चा भी विचारों से रहित है। एक ब्रह्मज्ञानी समाधिलीन मनुष्य है। उसका मन बाहर नहीं भटकता। बच्चे का मन भी बाहर नहीं भटकता। बच्चे की ज्ञान-इन्द्रियों के दरवाज़े बंद हैं। एक दरवाज़ा ऐसा है उसे दशम द्वार कहते हैं। जो नौं दरवाज़े हैं, उनके बारे में गुरु अमरदास जी कहते हैं :

हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ॥
वजाइआ वाजा पउण नउ दुआरे परगटु कीए दसवा गुपतु रखाइआ॥

(अंग ९२२)

ये जो नौ के नौ दरवाज़े हैं, खुले हैं। जीवन भर मन उन दरवाज़ों के द्वारा बाहर भटकता है। एक दरवाज़ा अनंत जन्मों से बंद है, उसे दशम द्वार कहते हैं। लेकिन दसवां गुप्त रखाया है मस्तक के अंदर। भक्त कबीर कुछ और भी कहते हैं:

दरमादे ठाढे दरबारि॥
तुझ बिनु सुरति करै को मेरी दरसनु दीजै खोल्हि किवार॥

(अंग ८५६)

हे प्रभु! मैंने ये नौ दरवाज़े बंद कर दिए हैं। आ गया हूं दसवें पर। अब तू बख़्शिश करके इसे खोल दे। नौ दरवाज़े प्रकृति ने खोल रखे हैं, दसवां दरवाज़ा परमात्मा खोलेगा। नौ दरवाज़े जन्म से ही खुले

हैं, दसवां हो सकता है मरने के बाद भी न खुले। इसलिए कबीर कहते हैं, हे प्रभु! मैंने यत्न करके, साधना करके, जप-तप करके नौ दरवाज़े बंद कर लिए हैं। इससे कहीं यह न समझ लेना कि कबीर ने कानों में रूई डाल ली और आंखें बंद कर ली होंगी तथा मौन धारण कर लिया होगा, चुप कर गया होगा। देखती हैं आंखें लेकिन इनके द्वारा मन बाहर भटकता नहीं, वाशना के कारण भटकता है।

जब पराया रूप मुतासिर (प्रभावित) करे, पराया धन प्रभावित करे तो आंखों के द्वारा मन बाहर जाता है। जब निंदा-स्तुति मुतासिर करे तो कानों के द्वारा मन बाहर जाता है। कुछ वचन ऐसे हैं जो कानों के द्वारा सुनें तो मन दसवें द्वार की तरफ जाता है। कुछ वचन ऐसे हैं जो बोलते-बोलते मन विकारी हो जाता है, बाहर भटकता है। कुछ वचन ऐसे हैं जो बोलते-बोलते मन भक्त हो जाता है, दसमें द्वार पर पहुंच जाता है:

बाबा बोलना किआ कहीऐ॥ जैसे राम नाम रवि रहीऐ॥

(अंग ८७०)

ये जो इंद्रियां हैं, दसवीं तो गुप्त है, ये नौ तो प्रकृति ने खोल कर रखे हैं। धरती की गोद में आते समय ये दरवाज़े नौ के नौ खुल जाते हैं। माता के गर्भ में यह नौ के नौ दरवाजे बंद थे। धन्य गुरु नानक देव जी महाराज, गुरु रामदास जी महाराज, गुरु अरजन देव जी महाराज ने चार-चार पहरे लिखे हैं सिरीराग में। उसमें स्पष्ट करते हैं कि रात के पहले पहरे में मनुष्य, यह जीव सोया हुआ नहीं था, जागा हुआ था :

पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हुकमि पइआ गरभासि॥

(अंग ७४)

जीव जिस दिन गर्भ में आया, वही उसका जन्म-दिन है। प्रत्येक मनुष्य को अपने जन्म के साथ जो इसने निश्चित तारीख लिख रखी है, उसके साथ नौ-दस महीने और जोड़ने पड़ेंगे। कब हमारा जन्म हुआ था? महान साइंटिस्ट भी हो, नहीं बता सकता। कब इस जीव ने मां के गर्भ में प्रवेश किया था? परमात्मा जाने। कब हमारा मरण होगा?

परमात्मा जाने। हुआ था जन्म, कब हुआ, प्रभु जाने। होगा मरण, किस दिन होगा, प्रभु जाने। इसे जानना भी हमारे वश में नहीं है। मां के गर्भ से धरती की गोद में आ गया है, उसे हम जन्म-दिन मानते हैं। वो गिनती के लिए सारे आसरे मौजूद हैं। धर्म आदि काल से वही जन्म-दिन मानता है जिस दिन का गर्भ में प्रवेश है। ढांचा जैसे अंदर तैयार होता है जीव अंदर प्रवेश करता है। किस गर्भ में कौन-सी मां को वह चुनता है, जिसके साथ उसके संस्कार का मेल मिलता है, जिसके साथ उसके संस्कार का संयोग जुड़ता है :

उरध तपु अंतरि करे वणजारिआ मित्रा खसम सेती अरदासि॥

(अंग ७४)

चाहे उल्टा ही लटका हुआ था गर्भ में लेकिन प्रार्थना में था। वाशना नहीं थी अरदास थी, गिले नहीं थे शुक्राना था। गुरबाणी पर विश्वास आ गया, परमात्मा पर विश्वास आ गया। धन्य गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश परमात्मा का प्रकाश है :

पोथी परमेसर का थानु॥

(अंग १२२६)

साइंस ने ऐसा नहीं माना। साइंस तो परमात्मा को भी नहीं मानती। चाहे उल्टा था तन करके लेकिन सुरति सीधी थी :

खसम सेती अरदासि वखाणै उरध धिआनि लिव लागा॥
ना मरजादु आइआ कलि भीतरि बाहुड़ि जासी नागा॥
जैसी कलम वुड़ी है मसतकि तैसी जीअड़े पासि॥
कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै हुकमि पइआ गरभासि॥

(अंग ७४)

यह ज़िंदगी की रात का पहला पहर है। आम लोग पहले पहर में सोते नहीं, जगे होते हैं। पहले पहर में परमात्मा ने इस जीव को जगा कर रखा हुआ है। यह सिमरन में है, भूला हुआ नहीं है। ये जननियां हैं-एक धरती मां, एक जननी मां।

...माता धरति महतु॥

(अंग ८)

इसकी भी महिमा अपनी है। अब धरती मां की गोद में आ गया। इस मां की गोद में आते समय महाराज कहते हैं :

दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा विसरि गइआ धिआनु॥

(अंग ७५)

ध्यान टूट गया, लिव टूट गई :

लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ॥

(अंग ९२१)

गर्भ में ब्रह्म–ज्ञान था, समाधि थी, परमात्मा की बख्शिश थी। अब जीवन भर अपने पतित संस्कारों को एक ओर करके उसकी रहमत ढूंढनी पड़ेगी :

हथो हथि नचाईऐ वणजारिआ मित्रा जिउ जसुदा घरि कानु॥
हथो हथि नचाईऐ प्राणी मात कहै सुतु मेरा॥
चेति अचेत मूड़ मन मेरे अंति नही कछु तेरा॥

(अंग ७५)

घर में लोग लड्डू बांट रहे हें, बधाइयां दे रहे हैं कि लड़के का जन्म हुआ, लेकिन भाई गुरदास कहते हैं कि उससे भी तो पूछो। वह तो धरती की गोद में आते समय जोर-जोर से रो रहा है। वह तो रो रहा है और हम लड्डू बांट रहे हैं, आप मुबारकें दे रहो हो। सारा परिवार खुशियां मना रहा है, लेकिन वह अपने दुख को रो रहा है। उसे क्या दुख है? लिव (ध्यान) टूट गई, नौ दरवाज़े खुल गए। इनके द्वारा मन बाहर जाता है। नौ खुल गए, दसवां बंद हो गया। पहले दसवां खुला था, नौ बंद थे। वे जो नौ बंद थे और दसवां खुला हुआ था, उसकी रहमत थी ताकि जीवन भर इसी अनुभव को ढूंढो और इसी अनुभव को याद करो।

यह जो मनुष्य के प्राणों में प्यास है शांति की, शांति मनुष्य देख चुका है। यह जो परम रस की प्राणों में प्यास है, ऐसा देख चुका है, भूल गया है। यह गुरबाणी याद करने का समय है। जिसे याद आ गया। कारण भी है एक। क्यों नहीं याद आता? धरती की गोद में आया, ध्यान टूटा और रोया। धीरे-धीरे रोना बढ़ गया। कौन-सा?

रिज़क का रोना, मां की खातिर रोना, पिता की खातिर रोना, खेलों के लिए रोना, खिलौनों के लिए रोना, रोज़गार के लिए रोना, फिर पुत्र-पुत्रियों का रोना, कारोबार का रोना। हज़ारों रोने इकट्ठे हो गए कि पहला रोना तो भूल ही गया। कभी-कभी कथा सुनते हुए, मंत्र का जाप करते हुए, इन सभी रोनों को एक-एक तरफ करता है लेकिन वह रोना फिर प्रकट हो जाता है :

हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा मै नीरु वहे वहि चलै जीउ॥

(अंग ९४)

वो रोना यदि जीवन में किसी ने प्रकट कर लिया तो वो दशम द्वार पर पहुंच गया। यहां आकर कबीर फरियाद कर रहे हैं :

दरमादे ठाढे दरबारि॥

तुझ बिनु सुरति करै को मेरी दरसनु दीजै खोल्हि किवार॥

(अंग ८५६)

हे प्रभु ! जैसे तेरी रहमत ने पहले नौ दरवाज़े बंद किए थे, दसवां खोल कर रखा था, साधना करके, सतसंग करके मैं दसवें द्वार तक तो पहुंच गया हूं। अब तू फिर रहमत कर, इसे खोल। इस दरवाज़े को जो खोलने में सफल हो जाता है, मुक्त हो जाता है। जीवन भर वही मनुष्य तलाश कर रहा है जो गर्भ-काल में बख्शिश करके परमात्मा ने झोली में दात डाली थी। ऐसा मेरा पातशाह इस शब्द की पहली पंक्तियों में फरमान करते हैं। आप श्रवण करो :

सोरठि महला ५॥

मात गरभ दुख सागरो पिआरे तह अपणा नामु जपाइआ॥

माता का गर्भ चाहे दुखों का सागर है। जैसे सागर की लहरें नहीं गिनी जा सकतीं, इस गर्भ-काल के दुखों को गिनना बहुत कठिन है। परंतु तूने अपना नाम जपाया, पूरी एकाग्रता दी, तूने प्रार्थना दी। इतने दुखों में सुख बना रहा, इतने क्लेश में आनंद बना रहा, उस कुंभी नरक में स्वर्ग बना रहा, सिमरन करके, तेरे नाम करके।

बाहरि काढि बिखु पसरीआ पिआरे माइआ मोहु वधाइआ॥

तू जैसे ही गर्भ-काल से बाहर आया धरती की गोद में तो ज़हर

फैल गया इस पर। अंदर गर्भ में गुणवान था, अब अवगुण पकड़ने शुरू हो गए, अब माया का प्रभाव पड़ गया। माया को एक पंक्ति में जिस ढंग से गुरु रामदास जी महाराज ने बयान कर दिया है, मैं ऐसा समझता हूं, इससे और कोई अच्छी व्याख्या नहीं हो सकती। कहते हैं, यह माया है, इसे माया जानो :

एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ॥

(अंग ९२१)

बस, हर उस वस्तु को माया समझो जिसे देख कर, अपनाकर गुरु भूले। क्योंकि मैं अपंग था, मेरे हाथ काम नहीं करते थे, मेरे पैर चलते नहीं थे, मैं मां के पैरों से चलता रहा, मैं पिता के हाथों से खाता रहा। यह तेरी कृपा थी, तूने माता-पिता बनकर मेरी पालणा की। मैं बुड्ढा हो गया :

बिरधि भइआ ऊपरि साक सैन॥
मुखि अपिआउ बैठ कउ दैन॥

(अंग २६६)

मात पिता सुत बंधप भाई॥

(अंग ८०५)

अब तू सुत बन कर, पुत्र बन कर, पौत्र बन कर मेरे मुंह में अन्न-पानी डाल रहा है। यह पौत्र कोई माया नहीं। पौत्र करके भी परमात्मा याद आता है। यह पुत्र कोई माया नहीं, पुत्र करके प्रभु याद आया है। यह धन, साजो-सामान कोई माया नहीं, यदि इसके कारण प्रभु याद आए। परंतु धन ने भुला दिया तो धन माया है। पुत्र में ऐसा फंसा, परमात्मा भूल गया तो पुत्र माया है, धन माया है, मित्र माया है, पत्नी माया है, पति माया है। प्रत्येक उस वस्तु को माया जानो जिसके कारण प्रभु भूले। जो-जो घटना, जो-जो वस्तु, जो-जो रिश्ता परमात्मा को भुला दे, समझ लेना माया है। यदि परमात्मा याद है तो कुछ भी माया नहीं।

जनक के लिए सिंहासन भी माया नहीं है, परिवार भी माया नहीं। परिवार में बैठे हुए भी वह निरंकार को याद करता है, सोने के

सिंहासन पर बैठ कर भी वह धर्म के साथ जुड़ा हुआ है, राजा होते हुए वह योगी है। भाई गुरदास जी को कहना पड़ा :

भगतु वडा राजा जनकु है गुरमुखि माइआ विचि उदासी।

(वार १० : ५)

लेकिन ज्यों ही धरती की गोद में आया गर्भ को त्याग कर, तो यहां ज़हर था, इन्द्रियों के द्वारा मन भटका। जितना मन भटका उतना दुखी। तृष्णा ने थकाया, वाशनाओं ने दौड़ाया और कई जन्मों से वाशनाएं दौड़ा रही हैं। इस तरह ज़हर फैली तथा यह जीव ज़हरीला हो गया। इस प्रकार माया ने अपना असर वरताया।

जिस नो कीतो करमु आपि पिआरे तिसु पूरा गुरू मिलाइआ॥

जिसके ऊपर उसके पूर्व के संस्कारों के अनुसार कर्म हो जाता है, बख्शिश हो जाती है, उसे फिर गुरदेव का मिलन हो जाता है, जिसके द्वारा वह फिर खोई हुई अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

सो आराधे सासि सासि पिआरे राम नाम लिव लाइआ॥ १॥

लेकिन गुरु के मिलन का सदका वह अपने ध्यान की डोरी फिर उस राम के साथ जोड़ता है जो माता के गर्भ में जुड़ी हुई थी। उस गर्भ-काल में जो उसकी अवस्था बनी हुई थी उस तरह की पुरानी अवस्था को वह फिर प्राप्त कर लेता है।

मनि तनि तेरी टेक है पिआरे मनि तनि तेरी टेक॥

इसलिए हे प्रभु! यह मरकज़ी ख़्याल है। मेरे मन को, मेरे तन को केवल तेरा ही आसरा है। वहां तेरे सहारे पर आनंद लेते रहे, इस संसार में माया में भी तेरा ही सहारा है। तेरे ही सहारे की पकड़ है। केवल तेरे सहारे को पकड़ा है।

तुधु बिनु अवरु न करनहारु पिआरे अंतरजामी एक॥ रहाउ॥

अन्य सहारा क्यों नहीं पकड़ा? समझ आ गई पूर्ण गुरदेव से। तेरे बिना अन्य कोई कर्त्ता नहीं है। तू ही कारन (करने वाला) है, तू ही रखवाला है और तू ही घट-घट की जानने वाला हैं।

कोटि जनम भ्रमि आइआ पिआरे अनिक जोनि दुखु पाइ॥

पता नहीं कितने जन्म भटकना था? करोड़ों योनियों में भटकता रहा। कितने जन्म तक पत्थर, वनस्पति, पशु-पक्षी रहे? मनुष्य होकर अचेत रहे, बंधे हुए रहे। आम दशा मनुष्य की ऐसी है कि मनुष्य मर कर फिर मनुष्य ही बनता है। क्यों? दान भी करते हैं, बेईमानी भी करते हैं। एक कदम आगे, एक कदम पीछे। सतसंग भी करते हैं, कुसंग भी करते हैं, श्रद्धा भी रखते हैं, शक भी करते हैं। फिर ये यहां के यहां ही रहते हैं। कभी-कभी ऐसा है, श्रद्धा बिलकुल नहीं, शक ही शक है। दान कुछ भी नहीं है बेईमानी ही बेईमानी है, सतसंग बिलकुल नहीं है कुसंगत ही कुसंगत है। इस तरह के लोग पीछे मुड़ जाते हैं। साहिब यहां कहते हैं कि करोड़ों योनियों में तू भटकता रहा लेकिन खुशकिस्मती है कि यह मनुष्य-जन्म प्राप्त हुआ है। पुत्री, पुत्र, दान, पान तो प्रत्येक योनि में चलता रहा, परमात्मा का मिलन केवल मनुष्य-देह में ही है, इसलिए दुर्लभ है। यह तुझे दुर्लभ देह प्राप्त हुई।

साचा साहिबु विसरिआ पिआरे बहुती मिलै सजाइ॥

ऐसा महान सच्चा साहिब मालिक वो भूल गया। गर्भ-काल में याद था, इस माया की अग्नि में याद न रहा। इस प्रकार फिर दुख अपनाने लग पड़ा, जबकि संसार में दुख नहीं हो सकता था। यदि गर्भ सागर में आनंद था तो संसार-सागर में भी आनंद हो सकता है, गर्भ-सागर में परमात्मा का मिलन था तो संसार-सागर में भी प्रभु का मिलन हो सकता है। लेकिन किया क्या जाए, इन ज्ञान-इन्द्रियों में मन इतना बाहर भटका कि घर आना ही भूल गया। तभी तो आवाज़ें दे रही है गुरबाणी :

मेरे मन परदेसी वे पिआरे आउ घरे॥

(अंग ४५१)

मेरे मन! तू घर आ तो सही, सारे सुख, सारे आनंद घर में ही हैं, लेकिन यह घर भूल ही गया। सतसंग, कथा-कीर्तन उस मनुष्य का सुना हुआ सफल समझ लेना जिसे घर याद आ जाए। महान है वह मनुष्य जो घर पहुंच गया है।

जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि॥

(अंग ८५३)

जहां से आना हुआ था वहां पहुंच गया।

जिन भेटै पूरा सतिगुरू पिआरे से लागे साचै नाइ॥

जिन्हें भेट नसीब हो जाती है पूर्ण गुरदेव की, वे फिर सच्चे नाम में अपना ध्यान जोड़ते हैं।

तिना पिछै छुटीऐ पिआरे जो साची सरणाइ॥२॥

जो सच की शरण में हैं और मुक्त हैं उनके पीछे चलने वालों के भी बंधन छूट जाते हैं, वे भी मुक्त जो जाते हैं, उन्हें भी उसी आनंद की प्राप्ति हो जाती है।

मिठा करि कै खाइआ पिआरे तिनि तनि कीता रोगु॥

भूला क्यों? परमात्मा ने माया में भी मिठास डाली, इन्द्रियों का भी रस है, लेकिन सभी रस एक दिन बेरस हो जाते हैं प्राकृतिक रूप में। कब? जब इन रसों में लीन हुआ मनुष्य रोगों तक जा पहुंचता है।

भोगं ता रोगं॥

गुरु अरजन देव जी :

असाध रोगु उपजिओ तन भीतरि टरत न काहू टारिओ॥

(अंग १००१)

इतने भयानक रोग पैदा हो गए हैं, इलाज भी कोई नहीं, दवाई भी कोई नहीं। ये रोग क्या हैं? आहारिक रोग। गलत देखते रहे, गलत सुनते रहे, गलत खाते रहे, गलत पीते रहे। हमारे घर में कोई गंदगी फेंक दे, हम झगड़ा करेंगे कि गंदगी वाली जगह पर फेंक, हमारे घर क्यों फेंकता है? लेकिन कोई गंदी बात करे, हम अपने कान खोल देते हैं, गंदे दृश्य देखने के लिए अपनी आंखें खोल देते हैं, गंदी बातों के लिए ज़ुबान चलाने के लिए राज़ी हो जाते हैं। पता नहीं कितनी गंदगी अंदर चली जाती है। कबीर तो कह रहे हैं :

मूंदि लीए दरवाजे॥

हर गंदगी के लिए मैंने ये दरवाज़े बंद कर दिए हैं। न ही मैं निंदा-स्तुति सुनता, न ही मैं बिखे नाद सुनता। न ही मैं वाशना के कारण किसी का धन तथा किसी का रूप देखता हूं।

बाजीअले अनहद बाजे॥

(अंग ६५६)

लेकिन क्योंकि माया में रस है। इस रस के कारण मनुष्य सेवन करता है, मीठा करके खाता है। महाराज कहते हैं, फिर अंजाम क्या होता है? कड़वाहट, रोग। इसे आयुर्वेद आचार्य भी मानते हैं आहार रोग, आहार चिकित्सा। कहता, रोग क्या है? आहार-रोग। औषधि क्या है? आहार औषधि, आहार चिकित्सा। खाना-पीना रोग है, खाना-पीना औषधि है। ९०प्रतिशत रोग आहारिक होते हैं, १०प्रतिशत मानसिक होते हैं। आहार-रोग का क्या इलाज है? आहार ही इलाज है। कुछ खाया है, उससे रोग पैदा हुए हैं। अब इसके विपरीत कुछ खाएंगे जो वैद्य, डाक्टर जानते हैं, इलाज हो जाएगा। कर्म-रोग का इलाज नहीं होता। कल तक निंदा-स्तुति को कानों के द्वारा आने दिया था और यदि आज प्रभु के नाम को कानों के द्वारा अंदर ले जाना शुरू करें तो सारी गंदगी निकल जाएगी। पराया रोग और पराया धन वाशना के द्वारा अंदर ले जाते रहे, लेकिन अब निर्मल दृष्टि के द्वारा, पवित्र दृष्टि के द्वारा सारे विश्व को निरंकार का रूप जान कर देखने लग पड़े, विश्वास जानो, बेशुमार रोग निकल जाएंगे। कोई भी औषधि किसी एक रोग को दूर करेगी परंतु प्रभु का नाम सारे रोगों को दूर करता है।

सरब रोग का अउखदु नामु॥

(अंग २७४)

अनिक उपावी रोगु न जाइ॥
रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ॥

(अंग २८८)

दवाइयां तूने बहुत खाई हैं, संयम भी रखा है। रोग गए नहीं तो समझ लेना यह कर्म-रोग है। तेरे किए उपायों से नहीं गया, लेकिन यदि कहीं तू प्रभु का नाम जपे तो कर्म-रोग भी चला जाएगा।

अनिक उपावी रोगु न जाइ॥ रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ॥

यह बात पूर्णतः सत्य है लेकिन शर्त है कि विश्वास होना चाहिए। नाम जपते-जपते सारी अंदर से गंदगी निकल जाती है, मन और तन

स्वस्थ हो जाता है। खाया मीठा करके लेकिन कड़वा होकर सामने प्रकट हुआ।

कउड़ा होइ पतिसटिआ पिआरे तिस ते उपजिआ सोगु॥

अनेक तरह के वियोग-विछोड़ों को जन्म दिया इस कड़वाहट ने, लेकिन मीठा करके सेवन किया था। इन सभी ने दुख को भी जन्म दिया, रोग को भी जन्म दिया।

भोग भुंचाइ भुलाइअनु पिआरे उतरै नही विजोगु॥

यह विछोड़े का दुख इसका उतरता ही नहीं, क्योंकि तरह-तरह के जो भोग हैं, परमात्मा ने खुद ही बनाए हैं। इसी में मनुष्य गलतान हो गया और अब विछोड़े का दुख मिटता नहीं, प्रभु का मिलन होता नहीं। ये भोग, ये रस, ये इन्द्रियों के रस भटकाते फिरते हैं।

जो गुर मेलि उधारिआ पिआरे तिन धुरे पइआ संजोगु॥

जिनके कोई पूर्व के संयोग थे, उन्हें गुरु का मिलन हुआ। उनका दसवां द्वार खुल गया, अनाहद का नाद बज गया :

माइआ लालचि अटिआ पिआरे चिति न आवहि मूलि॥

माया का लोभ, एक माया की ज़रूरत, ज़रूरत नहीं भटकाती। ज़रूरतों की तो सीमा है। कितनी आवश्यकता होगी? पशु की आवश्यकताओं से मनुष्य की आवश्यकताएं ज़्यादा नहीं हैं। पशु आवश्यकताओं में जीते हैं। मनुष्य आवश्यकताओं के साथ-साथ ख़्वाहिशों-वाशनाओं में जीता है। पशु की केवल आवश्यकताएं हैं, सुखी है। मनुष्य की आवश्यकताओं के साथ-साथ लालच है। प्रभुत्ता का लालच, धन का लालच, रूप का लालच तथा लालच की कोई सीमा नहीं। भूख की तो सीमा है। दो रोटियां खा लेगा, चार खा लेगा, आठ खा लेगा, लेकिन स्वाद की सीमा कोई नहीं। आवश्यकताओं की सीमा है। लालच की सीमा नहीं है तो लालच का भरा हुआ, लालच का फंसा हुआ यह भोग में फंसता है और इस तरह वियोग का यह दुख सहारता है। इस प्रकार जन्म-दर-जन्म भटकता है।

जिन तू विसरहि पारब्रहम सुआमी से तन होए धूड़ि॥

जिन्हें प्रभु तू भूल जाता है, यह जीता-जागता तन भी उनका धूल

की तरह होता है भाव कुछ भी नहीं। महान ज़िंदगी उनकी धूल की तरह होती है।

बिललाट करहि बहुतेरिआ पिआरे उतरै नाही सूलु॥

विलाप करते हैं, चिल्लाते हैं, व्याकुल होते हैं। दुखों के कांटें उनके निकलते नहीं। ये कांटे चुभते ही रहते हैं।

जो गुर मेलि सवारिआ पिआरे तिन का रहिआ मूलु॥४॥

जिन्हें गुरु का मिलन हुआ, उन्होंने अपने आप को संवार लिया तथा उन्होंने मूल तत्व की प्राप्ति कर ली अर्थात् परम आनंद की प्राप्ति कर ली।

साकत संगु न कीजई पिआरे जे का पारि वसाइ॥

जहां तक वश चले महाराज कहते हैं कि नास्तिक शक्ति का उपासक है, भक्त भगवान का उपासक है। नास्तिक के शाब्दिक अर्थ यही हैं, जिनकी ज़िंदगी का लक्ष्य धन है धर्म नहीं, जिसकी ज़िंदगी का लक्ष्य प्रभुत्ता है प्रभु नहीं, जिसकी ज़िंदगी का लक्ष्य काम है राम नहीं, जिसकी ज़िंदगी का लक्ष्य राम है, साधन काम हो सकता है, जिसकी ज़िंदगी का लक्ष्य प्रभु है प्रभुत्ता एक साधन हो सकती है, जिसकी ज़िंदगी का लक्ष्य तो धर्म है धन एक साधन हो सकता है। जो धन को और संसार को साधन की तरह लेता है, भक्त है, लेकिन जो संसार को लक्ष्य समझ लेता है और निरंकार को साधन समझता है या निरंकार को मानता नहीं, उसे कहते हैं नास्तिक। साहिब कहते हैं कि भूल कर भी नास्तिक की संगत न करना, नहीं तो तू भी शक्ति का उपासक हो जाएगा, शांति का उपासक नहीं होगा। भगवान के पीछे दौड़ने वाला मनुष्य एक दिन संसार में सबसे आगे हो जाता है, शक्ति के पीछे दौड़ने वाला मनुष्य सदा ही पीछे रहता है।

पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ॥

(अंग ८५८)

भक्त शिखर पर होता है।

जिसु मिलिऐ हरि विसरै पिआरे सो मुहि कालै उठि जाए॥

जिसे मिलते समय प्रभु भूलता हो, बस, इनके पास नहीं जाना

चाहिए, एक तरफ हो जाना चाहिए।

मनमुखि ढोई नह मिलै पिआरे दरगह मिलै सजाइ॥

मन के अधीन चलने वाले को दरगाह में स्थान नहीं मिलता बल्कि सज़ा मिलती है।

जो गुर मेलि सवारिआ पिआरे तिना पूरी पाइ॥५॥

जिन्हें गुरु का मिलन हुआ है, जिन्होंने गुरु द्वारा अपने आप को संवार लिया है, उनकी दरगाह में बात रह जाती है।

संजम सहस सिआणपा पिआरे इक न चली नालि॥

यदि लक्ष्य पदार्थ है, संसार है और करे धार्मिक साधना, चाहे कितना संयम रखे, कितने यत्न करे, एक भी साथ नहीं चलेगा, मन शोक-ग्रस्त रहेगा।

जो बेमुख गोबिंद ते पिआरे तिन कुलि लागै गालि॥

जो बेमुख हैं, परमात्मा से उल्ट चलते हैं, वे अपनी कुल को भी कलंकित करते हैं।

होदी वसतु न जातीआ पिआरे कूड़ु न चली नालि॥

परिपूर्ण परमात्मा, उसे तो नहीं जाना लेकिन जिसे जाना सदीवी करके जाना है। वह साथ चली नहीं।

सतिगुरु जिना मिलाइओनु पिआरे साचा नामु समालि॥६॥

जिन्हें सतिगुरु का मिलन हो जाता है और सच्चे नाम की संभाल करनी आ जाती है।

सतु संतोखु गिआनु धिआनु पिआरे जिस नो नदरि करे॥

जिसके ऊपर अपनी रहमत करता है, उसे संतोष तथा ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

अनदिनु कीरतनु गुण रवै पिआरे अंम्रिति पूर भरे॥

अमृत के साथ उनके हृदय भर जाते हैं क्योंकि दिन-रात वे प्रभु की कीर्ति सुनते हैं।

दुख सागरु तिन लंघिआ पिआरे भवजलु पारि परे॥

यह जो दुखों का सागर है संसार, मात-गर्भ जो दुखों का सागर था, प्रभु के सुमिरन के कारण बचे हुए हैं। यह सिमरन प्रभु ने आप झोली में डाला था। गुरु के मिलन का सदका इस दुखों के सागर से भी बच गए और परम पद की प्राप्ति हो गई।

जिसु भावै तिसु मेलि लैहि पिआरे सेई सदा खरे॥७॥

वे ही सदा खरे हैं जिन्हें वो पसंद आ जाता है, जो उसके हुक्म में रहते हैं और जो उसे प्यारे लगते हैं। जिन्हें वो अपना लेता है, बस वे खरे हैं, वे खोटे नहीं हैं।

संम्रथ पुरखु दइआल देउ पिआरे भगता तिस का ताणु॥

हे परिपूर्ण परमात्मा! ऐसी समझ दे, ऐसी सूझ-बूझ दे, क्योंकि भक्तों को तेरा ही आसरा है।

तिसु सरणाई ढहि पए पिआरे जि अंतरजामी जाणु॥

उसकी शरण में ही आ गए हैं जो अंदर की जानने वाला है, घट-घट की जानने वाला है।

हलतु पलतु सवारिआ पिआरे मसतकि सचु नीसाणु॥

उस परिपूर्ण परमात्मा ने बख्शिश का निशान मस्तक पर लगा दिया है, लोक-परलोक आसान कर दिया है अर्थात् संसार पर आना सफल हो गया है।

सो प्रभु कदे न वीसरै पिआरे नानक सद कुरबाणु॥ ८॥ २॥

ऐसा परिपूर्ण परमात्मा माता के गर्भ, जो वास्तव में दुख-सागर है, उसमें रक्षा करता है तथा जिसका जप, जिसका सिमरन संसार-सागर में रक्षा करता है, ऐसे प्रभु को क्यों भूलें? उस पर कुर्बान जाते हैं हम, जो संसार-सागर से भी पार कर देता है तथा गर्भ दुखों का सागर है, उसमें भी रक्षा करता है।

सतिगुरु रहमत करें! भूल-चूक की क्षमा!

वाहिगुरु जी का ख़ालसा॥ वाहिगुरु जी की फ़तह॥

☆☆☆